काम की बात

जल, जमीन, जंगल पर

शुद्ध हवा, शुद्ध जल, सफाई से जुडी हुई

विसगंतियो, समस्याओं एवं सम्भावित समाधानों पर लिखे

खुले पत्रों (वासठ पोस्ट कार्डों) का संग्रह

बंदना चौधरी

संबंधित आलेखों के परिशिष्ट-

“मीता-जीवन शैली प्रारूप” एंव

सनातनी वैश्विक व्यवस्था” से

प्रकाशक : बंदना चौधरी

प्रकाशक : बंदना चौधरी,   भारत

प्रकाशन – दिसंबर 2020, भारत

संशोधित संस्करण: जनवरी 2025

प्रकाशक : बंदना चौधरी

प्रकाशक: बंदना चौधरी

प्रथम तल, सी-6, अंबिका नगर,

शक्तिनत, भरूच, गुजरात (392001)

वेबसाइट: resurrectionofdharma.com,

निर्देशिका:

शीर्षक	**पृष्ठ संख्या**
1. प्रस्तावना	5-6
2, वासठ खुले पत्र	7-98
3, विशेष पत्र	99-100
4, परिशिष्ट-1, मीता-जीवन शैली प्रारूप जल, शुद्धता एवं स्वच्छ्ता, प्रदूषण, वातावरण तथा न्याय व्यवस्था विषय पर आलेख,	101-120
5. परिशिष्ट-2, सनातनी वैश्विक व्यवस्था, जल, जमीन, जंगल, विषय पर आलेख,	121-135

पुस्तक के सम्बन्ध में

प्रस्तुत पुस्तक- "काम की बात-जल, जमीन, जंगल के प्रबंधन पर वासठ खुले पत्रों का संग्रह" पिछले तीन वर्षों में विभिन्न विषयों पर हुए संवाद जो आज जनमानस के मध्य ज्वलंत समस्याओं के रूप में नजर आ रहीं हैं एवं उन संवादों को खुले पत्रों-पोस्ट कार्डों के रूप में इस सोच के साथ उतारने का परिणाम है की यह पोस्ट कार्ड यदि देश एवं दुनिया के महत्वपूर्ण पदों पर बैठे हुए महानुभावों को भेजा जाए तो शायद समस्याओं के समाधान निकल सकते हैं।

चूँकि जनमानस के मध्य ज्वलंत समस्यायें काफी हो गयीं अतः संवाद के विषय और इन विषयों से सम्बंधित महत्वपूर्ण पदों पर बैठे हुए महानुभावों की संख्या भी लंबी हो गई इसलिए खुले पत्रों का संग्रह एक साथ ही पुस्तक के रूप में संकलित करके इस आशा से प्रकाशित किया जा रहा है कि यह खुले पत्र अपने अपने नियत स्थान पर पहुंच जायेंगे या जान मानस द्वारा पहुंचा दिए जायेंगे । प्रस्तुत पुस्तक सभी के लिए शुभ कामनाओं सहित प्रेषित हैं।

बंदना चौधरी

प्रस्तावना

कहते हैं अनुभव की अभिव्यक्ति ही नए अनुभव का मार्ग प्रशस्त करता है। व्यक्तिगत अनुभव की अभिव्यक्ति से सामूहिक संवादों, समालोचनाओं और सुझावों का सिलसिला शुरू होता हैं और यदि यह अनुभव की अभिव्यक्ति सामूहिक कल्याण के लिए है तो समाज में एक नई आशा- उम्मीद का संचार करती है और यह अभिव्यक्ति संवाद-सहमति के मार्ग से होते हुए सहयोग की ओर अग्रसर होती है और कुछ समय पश्चात एक नए ढांचे या एक नयी व्यवस्था के रूप में दृष्टिगत होती है।

प्रस्तुत पुस्तक "काम की बात"-जल, जमीन, जंगल के प्रबंधन को लेकर जो खुले पत्रों का संग्रह है वह हमारी श्री नरेंद्र अग्रवाल से पिछले तीन वर्षों में हुए देश के विभिन्न इलाकों में वहां की स्थानीय समस्याओं के सम्बन्ध में संवाद का नतीजा और उस संवाद को जन-मानस के मध्य साझा करने की इच्छा का परिणाम है।

सोचा था कि इन खुले पत्रों को जो वास्तविक रूप से मैंने पोस्टकार्ड पर उतारे थे को यदि देश एवं दुनिया के महत्वपूर्ण पदों पर बैठे हुए महानुभावों को भेजा जाए तो शायद समस्याओं के समाधान निकल सकते हैं, लेकिन लगा की बहुत सारी विसंगतियां, समस्याएं तो मूल परिभाषाओं में सैद्धान्तिक परिवर्तनों करने और उनके चलन में आने के कारण आ गयीं है जो की प्रकृति को नजअंदाज करते हुए शायद व्यापारिक हितो को ध्यान में रख कर किये गए होंगे, अतः इन खुले पत्रों को पुस्तक के माध्यम से प्रकृति विरुद्ध लोंगो के विरोध में एवं प्रकृति पसंद लोंगो के सहयोग के लिए प्रेषित करना उचित जान पड़ा ।

खुले पत्रों के संग्रह में क्रम बनाना बहुत दिक्कत का काम लगा क्योंकि क्योंकि पढ़ने वालों की एवं उस पर काम करने वालों की अपनी-अपनी प्राथमिकतायें होगी और वह उसी क्रम में इस संग्रह को देखना चाहेंगे, अतः खुले पत्रों को पढ़ने वाले महानुभावों से निवेदन है कि वह जहां से मन आए वहां से पढ़ना शुरू करें, जैसा मन बनता है, बैसा

क्रम बनाये, जहाँ से काम शुरू कर सकते हैं वहां से शुरू करें, मुझे लगता है मेरा काम इतना ही रहा होगा की इन खुले पत्रों को इनको पढ़ने वालों तक पहुँचा दे।

खुले पत्रों को पढ़ने वाले महानुभावों से आग्रह है वह इनमें और अध्याय जोड़ना चाहे, इसको अपने हिसाब से प्रस्तुत करना चाहे, अपनी दृष्टि से अन्य लोगों को प्रेषित करना चाहते हैं तो जरूर करें, जिससे काम समय में ही समाज में समरसता कायम हो, इसी आशय से यह "काम की बात"-जल, जमीन, जंगल के प्रबंधन पर खुले पत्रों का संग्रह प्रेषित है:

प्रस्तुत पुस्तक- "काम की बात-जल, जमीन, जंगल के प्रबंधन पर वासठ खुले पत्रों का संग्रह" को मैं जनमानस तक पहुँचाने के कार्य में बुजुर्गों का आशीर्वाद एवं उत्साहबर्धन, साथियों का सहयोग एवं छोटों की सुभकामनाएँ रही, उन सभी का आदर सहित धन्यवाद।

शुभकामनाओं सहित,

बंदना चौधरी

खुला पत्र-01

ध्यानाकर्षण : जल, जमीन, जंगल, शुद्ध हवा, शुद्ध जल एवं साफ जमीन से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में-

01. जल, जंगल, जमीन, पर्यावरण, स्वास्थ्य, शिक्षा, आदिवासी- भारत में राज्य एवं केंद्र सरकार दोनों की विषय सूची में है।

02. जल एवं जल से जुडी हुई समस्याओ जैसे-पेय जल. सिंचाई, बाढ़, सूखा, जमीनी जलस्तर, जल प्रदूषण, जल के बटवारे पर झगडा, आधीं-तूफानों में वृक्षो के टूटने की संख्या बढना, एवं-पंजाब, बिहार, उत्तर प्रदेश इत्यादि की उपजाऊ जमीन का रेगिस्तान में तब्दील होना- दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है।

03. स्वंतत्र भारत में भी जंगल, वन, वन सम्पदा सरकार की सम्पत्ति है- जिससे जन भागीदारी का कोई प्रश्न ही नही उठता है। वन सुरक्षा, संरक्षा एवं सवर्धन में या लकड़ी, पेड़ काटकर घर ले गये तो यह व्यक्तिगत रूचि ही है जिसका परिणाम मानव जाती के साथ जंगली जानवरों, पशुओं व पक्षियों ने भी झेला है।

04. हरित क्रांति में पेड़ काटकर जो खेत बनाने एवं बढाने की जो परम्परा शुरू की वह जंगली जमीन पर प्रशासन, मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री द्वारा आदिवासियों व ग्रामीणों को कृषि का पट्टा वितरण करने से समस्या ने और भी भयावह रूप ले लिया है।

05. अगर जमीन शासकीय है तो खनन के लिये ग्राम सभा की मंजूरी क्यों ली जाती है- जंगल आदिवासियों का है या किसानो का, आखिर जमींन का मालिक कौन है- इसका निर्धारण जरुरी है। ***

खुला पत्र-02

ध्यानाकर्षण : दुनियां में गर्मी एवं वर्फीले मौसम की तीव्रता एवं अवधी का क्रमिक बढना (ग्लोबल वार्मिंग एवं आइसिंग) और हवाओं का या तो विल्कुल न चलना या तीव्र गति से चलना बढ़ रहा है- के संदर्भ में

धरती पर-दिन में मिटटी जल्दी गर्म होती है और रात में जल्दी ही ठंडी होती है-इसके बाद में पानी (तालाबों, नदियों या समुद्र में) और इसके बाद पेड़ों का इलाका-इसलिए जहाँ एक ओर धरती के अधिकांश इलाके में गर्मी का स्तर बढ़ रहा है-वही कुछ इलाको में सर्दी के मौसम में-सर्दी एवं बर्फबारी का ।

सूर्य धरती पर लगातार एक अनुमान के हिसाब से हजारों गीगावाट विद्युत के बराबर ऊर्जा (भेज) दे रहा है-पेड़ इस सूर्य उर्जा को जीवों द्वारा छोड़ी हुयी कार्बन डाई ऑक्साइड एवं पानी को मिलाकर अपना भोजन बनाते है और इस तरह वह वातावरण की गर्मी को अपने अंदर समाहित करते है और वातावरण में नमी और आक्सीजन छोड़ते रहते है जिससे वातावरण में तापमान एवं नमी नियंत्रित रहती है।

पेड़ो के कटने से सूर्य की यह उर्जा सीधे जमीन पर आती है और गर्मी बढ़ाती है – जिसका असर वातानुकूलन-एयर कंडिशनर जैसा होता है-एक तरफ गर्मी और दूसरी तरफ ठंडक।

सूर्य की ऊर्जा के साथ विद्युत गृहों एवं वाहनों में लगातार जल रहे तेल, कोयले, गैस एवं परमाणु विखंडन से वातावरण में अतिरिक्त गर्मी एवं कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा भी बढ़ रही है।

उपरोक्त दोनों बातें यह दर्शाती है की पेड़ो की आवश्यकता पहले से आज अधिक है। इस गर्मी से इंसानों के स्वभाव में गर्मी या फिर बर्फ जैसी जड़ता भी बढती जा रही है जो वैसे भी खतरनाक है। हरियाली से इंसान सहित सभी जीवों की सेहत अच्छी रहती है ।

तापमान बढ़ने से दिल-दिमाग गर्म होता है , दिमाग गर्म होने से गुस्सा आता है और गुस्सा आने से कलह, झगड़ा, लड़ाई एवं युद्ध तक होते है (उदहारण के लिए रेगिस्तान एवं बर्फीले इलाके में रहने वालों ने युद्ध की शुरुवात ज्यादा की है बजाये हरियाली वाले इलाके में आने वालों ने, दुनिया में युद्ध कम करने के लिए भी हरियाली सहायक है।

आज जल, जमीन, जंगल पर अत्यधिक ध्यान देने की जरूरत आन पड़ी है जो हम सब की जिम्मेवारी है। ***

खुला पत्र - 03

ध्यानाकर्षण: वृक्ष, जंगल एवं वृक्षारोपण से सबंधित समस्याओं पर,

बढ़ते हुए तथाकथित विकास की कीमत-पुराने वृक्ष चुका रहे है। शासकीय नीति के तहत कहने के लिए कहीं न कहीं उस से दुगने वृक्ष लगाये जा रहे, लेकिन नए पौधे कितने वर्ष जी रहे हैं-इसका आंकड़ा नही रखा जा रहा है। गैर शासकीय सूत्रों के हिसाब से ऐसे लगाये हुए वृक्षों के जीवन दर- दस से पन्द्रह प्रतिशत तक है बाकि पच्चासी से नब्बे प्रतिशत अपने शैशव काल में ही समाप्त हो जाते हैं। यह प्रतिशत लगभग वैसा ही हैं जैसे इंसानों के मामले में आज से पचास-सौ वर्ष पहले थी-घरों में दस बारह बच्चे पैदा होते थे और उनमे से एक-दो ही बच पाते थे।

चिकित्सा व्यवस्था में सुधार के बाद आज इंसानों में जन्म के समय मृत्यु दर एक फीसदी से भी कम हो गयी है। आज इंसानों के क्षेत्र में हर मर्ज के लिये डॉक्टर है और डॉक्टर की अच्छी कमाई भी, लेकिन वृक्षों, जंगलों के क्षेत्र में डॉक्टरों की नितांत कमी है।

बच्चों को-शिक्षा, सुरक्षा तब तक मिलती है-जब तक वह अपने पैरों पर खड़े नहीं हो जाते, इसी तरह यदि पौधों को भी दो-तीन वर्ष नर्सरी में विकसित एवं बड़े होने दिया जाये तो ऐसे पौधों की शुरुवात में जीवत वचे रहने की दर अस्सी से नब्बे प्रतिशत तक हो सकती है, अतः सम्बंधित, शासन एवं इसके सभी बिभाग, निजी संस्थाएं जो वृक्षारोपण का कार्य करती है इनमे सहयोग करती है से आग्रह है की नर्सरी में दो वर्ष तक विकसित एवं बड़े हुए पौधों को ही वृक्षारोपण कार्यक्रम में शामिल करे व रोपित करें ।

वृक्षों, जंगलों के क्षेत्र में, अगर हमें पानी की समस्या, शुद्ध हवा की समस्या, बदलते हुए मौसम के प्रकोप से बचना है तो-वनस्पति विज्ञान एवं आदिवासियों जो वृक्षों, जंगलों के अच्छे ज्ञाता है को इंसानों के डॉक्टर जैसी ही सुविधा, सम्पन्नता एवं सम्मान देना होगा-अन्यथा उसके बिना विकास एवं विनाश साथ-साथ ही आएगा।***

खुला पत्र - 04

ध्यानाकर्षण:- जंगलों के कम होने से जमीनी जलस्तर कम हुआ, धरती सूखी, जमींन की पकड़ कमजोर हुयी जिससे तूफानों, चक्रवातों के आने पर पेड़ो का उखड़ना वर्ष प्रति वर्ष बढ़ रहा है, के बावत:

उपरोक्त विषय में निवेदन है- की जब हरित क्रांति में पेड़ काट कर खेत बनाये गये तब इस विषय पर सोचा ही नही गया के इससे चक्रवातों, तूफानों एवं आँधियों में आने वाली हवा की गति कितनी प्रभावित होगी और हवा की तेज गति के कारण नुक्सान कितना और कितने दूर तक होगा।

अब जबकि जंगल कम हो गये है, पेड़ो की संख्या भी कम हो गयी है, खेतों की गर्मियों में फसल कट जाती है, सिंचाई भी बंद हो जाती है-जिससे धरती की ऊपर की सतह पूरी तरह सूख जाती है, जिससे-एक तो आंधी, धूल भरी हो गयी है-और थोड़ी सी तेज हवा में गर्मी में सूख कर कमजोर हुए पेड़, धरती के भी सूखी होने से जो जमींन की पकड़ कमजोर हो जाती है से आसानी से उखड़ जाते है-और धूल की आंधी, चक्रवातो, तुफानो का असर पांच सात-सौ किलोमीटर तक पहुँचना, इनसे पेड़ उखड़ना वर्ष प्रति वर्ष-भयावहता की ओर बढ़ रहा है, जो यह दर्शाती है की हरित क्रांति- जिससे फायदा जरा सा हुआ लेकिन जिसने वास्तव में वन्य वैविध्य और हरियाली मिटाई से नुकसान वहुत ज्यादा हुआ।

जंगलों के फिर से स्थापित करने की लिये-तमाम तरह के नुकसान जो पेंड़ो एवं जंगलों के कम होने से हुए को जोड़े और यदि उसी अनुपात में पैसा एवं प्रयास लगाएं तो जल, जमीन, जंगल में समरसता कायम करने की दिशा में हम आगे बढ़ सकते है।***

खुला पत्र - 05

ध्यानाकर्षण:- जंगल-जंगलों के खनिज को बेचना, किराये पर देना से सबंधित समस्याओं पर:-

भारत में जंगल किसके है, केंद्र सरकार, राज्य सरकार या वन बिभाग के सरकारी नौकरों के या ग्रामों के या आदिवासियों के या सामूहिक?

यदि जंगल ग्रामों के नहीं तो ग्राम सभा का अनुमोदन-जंगलों को अधिग्रहण करने दूसरे कार्यों के लिए उपयोग में लेन या बेचने के लिये कैसे मान्य हो सकता है , ग्राम सभा का अनुमोदन उनके ग्राम को बेचने के लिये शायद मान्य हो भी जाये लेकिन जो जिसकी जमीन ही नहीं वह उसे बेचने का अनुमोदन कैसे कर सकता है ।

यदि जंगल ग्रामों के है तो वन बिभाग के सरकारी नौकरों को ग्राम सभा के अधीन होना चाहिए। सारे जंगल या तो केन्द्रीय या राज्य सरकार के है या आदिवासी एवं जंगली जानवरों- हाथी, शेर इत्यादि के है, अगर केंद्र सरकार जंगल बेचने का अनुमोदन चाहती है तो उन्हें यह अनुमोदन जंगली जानवरों एवं आदिवासियों से लेना चाहिए।

सरकारें इंसानों को तो बसा भी देंगी, भगवान को, आस्था को एवं जानवरों को कैसे-कैसे विस्थापित करेंगी -और ऐसा है तो रामजन्म भूमि का आन्दोलन की क्या अहमियत थी-इन सब पर विचार जरूरी है।

विकास किस कीमत पर यह विचार जरूरी है-क्या आस्था पर, क्या जानवरों व वृक्षों की हत्या करके, क्या आने वाले बच्चों का जिनके नाम पर विकास हो रहा है का भविष्य दाँव पर लगा के?***

खुला पत्र-06

ध्यानाकर्षण: समाज में परिभाषाएं बदली है-इसलिए परेशानी बढ़ी है विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में-

स्वास्थय है तो सम्पदा का मूल्य है, संसार में सभी का स्वास्थ्य बिगड़ा है, जिन पंच तत्वों से जीवन चलता है उनका अनुपात बिगड़ा है, जल, जमीन, जंगल, शुद्ध हवा, शुद्ध जल एवं साफ जमीन का अनुपात बिगड़ा है, इनकी गुणवत्ता खराब हुई है, इनकी उपलब्धता कम हुई है-जिससे तन, मन, दिल, दिमाग एवं आवोहवा (वातावरण) में विसंगतिया पैदा हुई है-और इनमे वृधि हो रही है।

परिभाषाएं बदली है-इसलिए परेशानी बढ़ी है समाज में 'हम से मै' महत्वपूर्ण हो गया, अर्थव्यस्था जो खेत-खलियान, वन वनोपज पर आधारित थी वह खेत-खलियान-खनिज-खदान ओर निर्भर हो गई-यानी अर्थव्यस्था, जमीन और जमीन के उपर की बजाये जमीन और जमीन के नीचे पर-इसके परिणाम स्वरूप सामूहिक समृधि कम एवं व्यक्तिगत समृधि बढ़ी है।

ध्यान एवं दृष्टि-जमीन एवं जमीन से उपर की बजाये जमीन एवं जमीन से नीचे हो गई है-फलस्वरूप उच्चता के स्थान पर निम्नता (कमीनेपन) मे वृधि हुई है, नये का सम्मान और वृद्धों का अपमान बढ़ा है। समाज में उपगोगिता एवं तात्कालिकता पर जोर बढ़ा है।

हमारा प्रयास समाज में व्यक्तिवाद से सामूहिकता, अर्थव्यवस्था में खेत-खलियान, खदान-खनिज के वजाये खेत-खलियान एवं वन-वनोपज का भी महत्व एवं सम्मान रहे, नए और पुराने के मध्य समन्वय रहे की दिशा में होगा तो जल, जमीन जंगल से सम्बन्धित समस्याओ के समाधान आसान होंगे।

भारत यदि वसुधैव कुटुंबकम की दम्भ भरता है तो इसे ठीक करने की जिम्मेदारी भारत की ही है। परिवार की परिभाषा व जल, जमीन, जंगल पर मालिकाना हक की परिभाषा, सरकार एवं समाज की परिभाषा में स्पष्टता जरूरी है।

लोकतंत्र में या वैसे भी यदि हम स्वतंत्र है तो नौकर (सरकारी)-कलेक्टर, जज, सचिव मालिक जैसे क्यों रहते है-इसे ठीक करना जरूरी है। शायद इस बदलाव से ही चीजें ठीक होना शुरू हो। ***

खुला पत्र-07

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, समुद्री जल स्तर बढने एवं इनसे जुडी हुई समस्याओं के सन्दर्भ में-

आज जब दुनिया में समुद्री जल स्तर बढने और उससे उत्पन्न खतरे के बारे में चर्चा होती है- तब क्या यह गौर करने की बात नहीं है-कि क्या समुद्री जल स्तर-समुद्र पर कचरा- मिट्टी डालकर बढ़ाया जा रहा है या समुद्र में पानी की आवक ज्यादा हो गयी है और बादलों द्वारा पानी की निकास की मात्रा कम हो गयी है।
क्या समुद्री जलस्तर दोनों ही कारणों से (मिट्टी के समुद्री सतह में जमाव से एवं समुद्र में पानी के ज्यादा भराव से) बढ़ रहा है या समुद्र में पानी किसी दुसरे ग्रह से आ रहा है जिससे धरती पर समुद्री जल स्तर बढ़ रहा है?
अगर समुद्र में पानी किसी दुसरे ग्रह से आ रहा है तो-ध्यान देने वाली बात यह है कि दूसरे ग्रह से धरती पर उडन तस्तरियों के आने की बात या पृथ्वी से उपग्रह छोड़े जाने की बात तो होती है लेकिन पानी की या किसी अन्य प्रदार्थ (सूर्य की रोशनी एवं गर्मी और चाँद तारों की रोशनी के अतिरिक्त) की पृथ्वी पर आने या पृथ्वी से जाने की बात सामने नही आयी, ऐसी स्तिथि में यह बात महत्वपूर्ण हो जाती है कि यह पानी और मिट्टी जो समुद्र में भराव बढ़ा रहे है वह कहीं न कहीं कम भी हो रहे होंगे और वहाँ दिक्कत भी पैदा कर रहे होंगे- आखिर वह कौन सी जगह है?
ज्ञात अनुभवों से कहा जा सकता है कि अगर जंगल, पहाड़ो पर एवं घाटियों में वृक्षो की सघनता एवं पृथ्वी पर वृक्ष वैसे ही नहीं होंगें जैसे (अर्ध-नारीस्वर-स्त्री+पुरुष) के शरीर में केश-बाल एवं रोम छिद्र होते है -तब वर्षा का पानी, पहाड़ो और मैदान से मिट्टी बहाते हुए समुद्र में ले जायेगा।
पानी एवं मिटटी के इस वहाव को रोकने के लिये एवं व्यवस्था का चक्र बनाये रखने के लिये मूल व्यवस्था पर यानि की जंगल-जल जमीन पर इसकी सुरक्षा-संरक्षा पर ध्यान देना आवश्यक होगा जो शायद सवांद, सहमती एवं सहयोग द्वारा आसानी से किया जा सकता है।***

खुला पत्र-08

ध्यानाकर्षण: आदिवासियों के रोजगार का हक, शुद्ध जल, शुद्ध वायु, एवं जल, जमीन, जंगल तथा जलचर, थलचर एवं नभचर के मध्य समरसता के सन्दर्भ में:

इस विषय पर अपनी बात कहने के लिये एक परिकल्पना का सहारा लेते हुए निम्न निवेदित है:

परिकल्पना :- उपरोक्त लिखी हुई एवं इनसे सबंधित तमाम समस्याओं के निदान हेतु एक देश में वहाँ की तत्कालीन सरकार ने शासकीय भूमि पर जो लाखों एकड़ में थी पर बेरोजगार युवक-युवतियों को विभिन्न प्रकार के वृक्ष लगाने के लिये इस शर्त पर संविदा पर रखा कि उन्हें पारिश्रमिक के रूप में पहले पांच वर्ष पेड़ लगाने के लिये आवश्यक साधनों के अतिरिक्त (भारत में वर्ष दो हजार बीस के हिसाब से) पहले पांच वर्ष-पांच हजार रूपए प्रतिमाह के हिसाब से- उसके बाद अगले पांच वर्ष दो हज़ार रूपए प्रतिमाह के हिसाब से और इसके बाद जब वृक्ष बड़े हो जायेंगे तब वृक्षों का उत्पाद- जैसे जलाने के लिए लकड़ी, खाद बनाने के लिए पत्ते , फल, फूल इत्यादि उन्हें मिलेगा, इसके अतिरिक्त वृक्षों का एवं जमीन का मालिकाना हक युवक-युवतियों एवं सरकार का साझा व सामूहिक होगा। वृक्षों की सुरक्षा-सरंक्षा का काम प्राथमिक रूप से युवक-युवतियों का ही होगा एवं शासन का हस्तक्षेप इसमें न के बराबर एवं युवक युवतियों के आग्रह पर ही होगा।

उस देश में दस वर्ष में जो स्थिति हुई वह कुछ इस तरह है:- संविदा पर रखे गए युवक-युवतिया बढ़े हो गये, अधिकांश का विवाह भी हो गया और कईयों के वच्चे भी हो गए और इस तरह उन सभी का परिवार बड़ा हो गया, यह नया परिवार उस रोजगार पर आश्रित हो गये, वह वृक्षो की श्रृंखला उनका जीवन हो गया। उसके पचास वर्षों में युवक-युवतियों जंगल का ही हिस्सा हो गये और एक तरह से आदिवासी जैसे हो गए तथा वृक्षों की सघनता के कारण पशु-पक्षियों की संख्या बढ़ गयी जिसके फलस्वरूप राज्य में शुद्ध हवा, शुद्ध जल एवं जैवकीय विविधता उपलब्ध हो गयी।

इस व्यवस्था के यदि हजारों वर्ष बाद कोई पूछे कि जंगल पर मालिकाना हक किसका है, तो क्या जवाब होगा?

- उपरोक्त के जवाब में ही- आदिवासियों का हक, शुद्ध जल, शुद्ध वायु, एवं जल, जमीन, जंगल तथा जलचर, थलचर एवं नभचर के मध्य समरसता के सब प्रश्नों के उत्तर है, जो आज हम खोज रहे है? ***

खुला पत्र-09

ध्यानाकर्षण: स्वस्थ, सुखी, समृद्ध, सहृदय जीवन के लिये शुद्ध जल, शुद्ध वायु, शुद्ध भोजन के संदर्भ में:

जैसा अन्न वैसा मन, जैसा पानी वैसी वाणी, जैसा वातावरण वैसा आवरण, जैसा चित्त, जैसी चेतना, जैसी चित्त की वृत्ती वैसी ही कृति, जैसा कृत वैसा ही वृत-परिवार समाज, देश, दुनिया।

कहते है:-शरीर अन्न से बनता है, अन्न जल से उत्पन्न होता है, जल वर्षा से आता है, वर्षा यज्ञँ से (प्रार्थना से) होती है और यज्ञँ कर्म से संपन्न होता है ।

शुद्ध तन-मन, स्वस्थ दिल-दिमाग, शुद्ध जल-वायु एवं भोजन से रहता है। शुद्ध जल-वायु एवं भोजन वृक्षो से, जंगलों से एवं कृषि से आता है, शुद्ध एवं स्वस्थ दिल-दिमाग ऋषि, साधु-संतो के सानिध्य से रहता है, सभी जरुरी है और किसी को कम आँकना, अपने अन्दर ही कमी पैदा करना है।

स्वस्थ, सुखी, समृद्ध, सहृदय जीवन के लिये समस्याओं का समाधान जरूरी है, विशेषताओं का उत्थान जरुरी है। समस्याओं का समाधान एवं विशेषताओं के उत्थान के लिये-सवांद, सहमती एवं सहयोगात्मक कार्य एक सीधा, सरल एवं सकारात्मक कदम हो सकता है। हमारे ध्यानाकर्षण हेतु जीवन जिन तत्वों से-जल, मिट्टी (भौतिक प्रदार्थ), अग्नि (उर्जा), वायु एवं आकाश (खुला स्थान) से बना है, की उपलब्धता एवं शुद्धता, सवांद के मूल बिंदु हो सकते है ।***

खुला पत्र-10

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन जंगल से सम्बन्धित समस्याओ के समाधान के संदर्भ में:

कहते है जंगल है तो जानवर है, जानवर है तो पेड़ सुरक्षित है, पेड़ सुरक्षित है तो शुद्ध हवा है एवं शुद्ध जल है, शुद्ध हवा एवं शुद्ध जल है, तो स्वस्थ, सुखद एवं समृद्ध जीवन की कल्पना है-कल की आशा है।

इसलिए
"भारत में प्रकृति प्रधान है, ऋषि एवं कृषि भारत की संस्कृति है"।
"जल, जमीन एवं जंगल पूज्यनीय है एवं ऋषि एवं कृषि-कर्ता सम्मानीय", "आदिवासी पूज्यनीय एवं शहरी सभ्यता सम्मानीय",
"कर्म पूज्यनीय है, ज्ञान एवं भक्ति सम्मानीय",
"दिल पूज्यनीय है एवं दिमाग सम्मानीय"
समयांतर में चीज़े बदल गयी, मुख्य बातें विस्मृत हो गयी और समस्याये खड़ी हो गई, आज मौलिक परिभाषाएं पुनः परिभाषित करने की जरूरत है, अपने गौरवशाली अतीत की मूल अबधारणायों की स्मृति आ जाये तो व्यवस्था वनाना आसान होगा ।

आज समाज एवं संसार में आस्था के आधार पर सम्यकता लाने की जरूरत है, हमें छोटे-छोटे घने जंगलों, मंझौले एवं बड़े जंगलों को उसी तरह स्थान देना ही होगा जैसे इंसानी रिहायस के ग्राम, शहर, नगर महानगर हैं।

जंगल और शहर एक दूसरे के पूरक है, एक के बिना दूसरा लंबे समय तक नहीं रह सकता। प्रकृति परंपरागत रूप से पूर्णता-पूर्ण-आत्मा, या परम -आत्मा या कहे- परमात्मा का ही परिचायक है, जिसके प्रत्येक अवयव आपस में आदान प्रदान करते है।

जितना छोटा अवयव या कहें जितनी छोटी आत्मा उसकी उतनी ही छोटी आवश्यकता है, उतनी ही दूसरे पर निर्भरता, जितनी महान होगी आत्माएं उनकी आवश्यकता भी

उतनी ही महान या बड़ी होगी, उतनी ही बड़ी उसकी दूसरों पर निर्भरता होगी, और पूर्ण आत्मा तो परमात्मा है, अल्लाह है, ब्रह्म या ब्रह्मांड हैं वह सब पर और सब उस पर निर्भर।

कितने ही ज्ञानी-जन अक्सर आत्मनिर्भरता की बात करते हैं, ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि वह ज्ञानी-जन इस आत्मनिर्भरता को विस्तार से पहले समझे फिर ही बताएं और समझाएं अन्यथा उनमे और एक अज्ञानी या अल्प-ज्ञानी में कैसा भेद?
***

खुला पत्र-11

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, कृषि, वृक्षों एवं वनों के वीच में समन्वय के सम्बन्ध में:

कहते है बड़े पेड़ के नीचे एवं आसपास कुछ पैदा नही होता एवं छोटे पेड़ के नीचे बहुत थोड़ी पैदावार होती है, और इस समझ से किसान जो अन्नदाता एवं सम्मान के साथ देखे जाते है-पेड़ो के दुश्मन हो गये है, पेड़ो के हत्यारे हो गये।

किसानो की इस समझ और हमारी ज्यादा पैदावार की लालसा ने देश व दुनिया जो कभी काफी घने जंगलों के लिये मशहूर क्षेत्र थे आज ऊँट जो रेगिस्तान की शान है को आमंत्रित कर लिया है-वह चाहे पंजाब हो, उत्तरप्रदेश हो, मध्यप्रदेश या बिहार हो या अन्य देशों के वन्य स्थान । दूसरी और किसानों की पानी की जरूरत ने धरती के अंदर के पानी को सुखा दिया है -क्योंकि लालसा है पंजाब में भी धान की खेती हो, फिर चाहे कल पीने के पानी की किल्लत हो या गहरी धरती के अंदर के रासायन युक्त या कारखानों से विसर्जित जहरीला या नालों का प्रदूषित पानी पीने की मजवूरी।

क्या खेती, 'घरो की छतो पर', 'दीवारों पर, तालाबों व झीलों के उपर', 'लकड़ी की नावों पर', नहीं हो सकती? क्या खेती, 'पत्तों एवं फसलों के बचे हए डंठलों' से बनाई गई खाद पर नहीं हो सकती ? क्या खुली जगह वृक्षों के लिए उपलब्ध नहीं रखी जा सकती रहे ? क्या खेती के लिये 'टीवी, अख़बार एवं मोबाइल पर सरकारी ज्ञान के साथ-साथ धर्म स्थलों का योगदान' ज्यादा कारगर कदम नहीं होगा ?

कितनी खेती, कौन सी खेती, कितना जंगल और किसका जंगल?, एक नए सवांद की जरूरत हैं।***

खुला पत्र - 12

ध्यानाकर्षण :- जल, जमीन, जंगल तथा लकड़ी, कोयला, एल.पी.जी., केरोसिन, पेट्रोल एवं डीजल:

महिलाओं के सम्मान या घरेलु धुँआ रहित इंधन के प्रावधान हेतु-एलपीजी (रसोई गैस) का प्रचार-प्रसार एवं वितरण बढ़ा जो स्वागत योग्य कदम कहा जा सकता है (इसमें एक बात और ध्यान में रखी गई थी की घरेलु ईंधन के लिये जो जंगलों की कटाई होती है वह रुक जाय) ।

इस संदर्भ में यह ध्यान देने योग्य है की एक तो एल.पी.जी. व केरोसिन, पेट्रोल एवं डीजल की तरह बाजार में खुले/मुक्त रूप से उपलब्ध नहीं हो पाये, दूसरा जिन लोंगों को मुफ्त में गैस दी गई उनमे से करीब तीस फीसदी लोंगों ने अपने पैसे से गैस सिलेण्डर दुबारा भराया ही नहीं, या तो उनके पास पैसे न हो या वह अपनी आदत नही बदल पाये हो, और इस तरह से अधिकांश ग्रामीण इलाके में अभी भी कोयला एवं लकड़ी का प्रयोग ही हो रहा है।

वहीं एक बात और ध्यान में देने वाली है की खुले बाज़ार में कोयला पूरे देश में (वर्ष 2020 में) चौदह से बीस रु. किलो की दर से मिलता है-और यही कोयला पॉवर प्लांट को अधिकतम चार रु. में मिलता है, जो (कीमतों में यह अंतर) सर्वथा अनुचित कहा जा सकता है।

जहाँ तक घरो से निकलने वाले लकड़ी एवं कोयले के धुएँ की बात करे तो यह वाहनों एवं पॉवर प्लांट के धुएं के मुकावले न के बराबर है।

जंगलों को कटाने के लिये कोयला और एलपीजी की स्कीम ऐसी ही रखी जा सकती है लेकिन यदि जंगलों को सुरक्षित रखना है तो-कोयला एवं एलपीजी के मूल्य व उपलब्धता को तर्क संगत बनाया जा सकता है।***

खुला पत्र-13

ध्यानाकर्षण: जंगल, जंगली जमीन, जानवर, पक्षी एवं आदिवासियों से सम्बन्धित विषयों पर:

उपरोक्त विषय पर जब बुजुर्गो से बातें की तो समस्या के निम्न कारण, समस्या का समाधान, समाधान का सरलीकरण तथा सरलीकरण के जमीनीकरण के सूत्र उभर कर सामने आये-

01. वृक्ष को जिन्दा रहने के लिये कार्बन डाई ऑक्साइड एवं इंसानों को जिन्दा रहने के लिये आक्सीजन चाहिए-जो प्रकृति में जीव-जन्तु एवं वृक्ष-वनस्पति एक दूसरे को देते है। कार्बन डाई ऑक्साइड कम होने या कहें आक्सीजन के बढ़ने से वनों में आग लगने की घटना एवं वृक्ष कम होने से शहरों में आग जैसी गर्मी या मरुस्थल जैसी बर्फ जमी रहती है या ठंड बनी रहती है।

जीवन एवं जीवन में जीवन्तता वनी रहे इसके लिये जल, जमीन, खेत, खलियान, खदान, खनिज, जलचर, थलचर, नभचर के मध्य अनुपातिक सामंजस्य का होना एवं इस सामंजस्य बना रहे यह जरुरी है, जो समुन्द्र और पर्वतों के क्षेत्र को छोड़कर-जल, जमीन, जंगल के मध्य बराबरी का है(कहते है धरती पर सैतीस प्रतिशत वृक्ष/जंगल होने चाहिए)।

02. जमीन पर मालिकाना हक मानव सभ्यता का एवं जंगलों में मालिकाना हक आस्था के आधार पर जी रहे जीव-जन्तुओं, पशु-पक्षियों, वनस्पतियों एवं आदिवासियों का एवं जल पर सयुंक्त कहा जाता है इसके अतिरिक्त जंगल, जमीन के अंदर के पानी को सरंक्षित करने का काम करेगा एवं ग्राम व शहर जमीन के उपर के जल को सरंक्षित रखने का काम करेगा हैं।

03. समाधान के रूप में प्राथमिक तौर पर परिभाषाये ठीक करनी होगी, मालिकाना हक सुनिश्चित करना होगा और उसे परस्पर आदर के साथ समाज, शासन एवं प्रशासन के मध्य लाना होगा।

भारत एवं अन्य प्राचीन देश इस विभाजन एवं इसकी जिम्मेवारी को पूर्व में समझते आये है अतः यह भारत की ही जिम्मेवारी है की वह इस कार्य को शुरू करे हैं।***

खुला पत्र-14

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, वर्षा ऋतु में पहाडियों और घाटियों से हुए मिट्टी के क्षरण के सन्दर्भ में:

भारत में मौजूदा ओधोगिकरण के दौर में उद्योगोँ एवं खनिज पदार्थों के लिए जमीन से, हरित क्रांति में फसल बढ़ाने के लिए खेती की जमीन से एवं श्वेत क्रांति में चारागाह बनाने के लिए जमीन से जो पेड़ एवं जंगल कटे ने देश की अधिकांश पहाड़िया एवं घाटियाँ को पेड़ों से रिक्त कर दिया है, ऐसे में जब भी तेज़ वर्षा होती है तो वर्षा का जल पहाडीयों और घाटियों से मिट्टी काटते हुए तेज़ प्रवाह से नालों, नदियों से होते हुए इस कटी हुयी मिट्टी को समुन्द्र तक ले जाता है।

वर्षा के जल के इस तेज़ प्रवाह व मिट्टी के क्षरण को वर्षा ऋतु में आसानी से बाढ़ के प्रकोप व नदियों में पानी के मटमैले रंग से देखा व अनुभव किया जा सकता है, अखबार में पढकर समझा जा सकता है या टेलीविजन एवं मोबाइल पर भी देखा जा सकता है।

पहाड़ियों और घाटियों से हुए मिट्टी के क्षरण को वर्षा के समाप्त होते ही नालों , नदियों में पानी के बजाय रेत के अतिरिक्त जमाव से समझा जा सकता है। वर्षा ऋतु में पहाड़ियों और घाटियों से हुए मिट्टी के क्षरण से पिछ्ले पचास-सौ वर्षों में बने बांध, पारम्परिक नदियाँ एवं पुराने तालाब पेयजल आपूर्ति एवं सिंचाई के लिये अनुपयुक्त साबित हो रहे है। नदियों पर बनी नहरें एवं छोटे बांध- चेकडेम सफेद हाथी की तरह साबित हो रहे है।

प्रश्न उठता है, की जब नदियों में एवं जलाशयों में पानी ही नहीं है तो नहरों के जाल एवं नदियों को जोड़ने से पैसे एवं पर्यावरण की बर्बादी के आलावा क्या हासिल होगा ?

शायद समय है एकीकृत वन नीति, वनो के मालिकाना हक पर सवांद एवं सहमती की।***

खुला पत्र -15

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल। पेड़ों, उद्यानो एवं जंगलों के बीमा के सन्दर्भ में:

जंगलों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में वृक्षों की सघनता बढ़ाने के लिये शासन ने जैसे किसानों को वार्षिक सहायता राशी मुहैया करायी है उसकी तरह ही जो कृषक अपनी जमीन में जितने पेंड लगाये उसके हिसाब से उसे पहले कुछ वर्षों तक सहायता राशी मुहैया करायी जा सकती है और जैसे खेती में फसलों का या इंसानों का जीवन वीमा होता है उसी तरह पेड़ों का भी वीमा करने की जरुरत है हालाँकि पेड़ों के मामले में विपरीत- रिवर्स वीमा व गिरवी रखने के व्यवस्था की जरुरत है।

पेड़ों के मामले में विपरीत- वीमा व गिरवी रखने के व्यवस्था में जैसे जो पेंड जितने जिन्दा रहेगा उतना पैसा उसके रखवाले को मिलेगा-जो बरगद, पीपल, नीम, महुवा, अचार, तेंदु जैसे अलग-अलग वृक्ष के लिये अलग-अलग हो सकता है, की जरूरत है, विपरीत-वीमा व गिरवी की यह व्यवस्था शासकीय या निजी उद्यानों के लिये भी की जा सकती है।

जैसे शहरों में कितने हिस्से में मकान रखना है कितना खाली छोड़ना है की व्यवस्था होती है इसी तरह एक योजना खेतों में वृक्षों के लिए खाली स्थान को छोड़ना या लगे हुए वृक्षों की सघनता का स्थान की एक न्यूनतम आवश्यकता रखी जानी जरुरी होना- आज की हालत में जरूरी कदम होगा।

वृक्षों के लिए खाली स्थान को छोड़ना तथा पेड़ों के मामले में विपरीत-वीमा व गिरवी की योजना पर सवांद-सहमती एवं सहयोगात्मक कार्य आवश्यक है ।***

खुला पत्र -16

ध्यानाकर्षण :- जल, जमीन, जंगल, शुद्ध जल, शुद्ध वायु, खदानों एवं जलाशयों में मिट्टी व राख एवं अपशिष्ट के भराव के सन्दर्भ में:

लकड़ी से बने कोयले और खदान से निकले कोयले में मूल अंतर यह है की लकड़ी का कोयला प्राकृतिक एवं एक शाश्वत प्रक्रिया है, लकड़ी के कोयला में जो भी अवयव होते है वह जीवों के लिये घातक नही होते-इसके विपरीत खदान से निकला कोयला एक शाश्वत प्रक्रिया नहीं है । खदान से निकले कोयले के अवयवों में मिट्टी के अंदर दबे हुए कई घातक अवयव जैसे मरकरी (पारा) एवं आर्सेनिक तत्व भी शामिल होते है ।. खदान से निकले कोयला के जलने के बाद जो राख निकलती है वह यदि ज्यादा मात्र में पानी में मिल जाये तो उसके पीने से बीमारियाँ लगना पक्का है, इसलिए खदान से निकले कोयले के जलने से जो राख निकलती है उसके लिए कोशिश यह होनी चाहिए की वह पानी के स्त्रोंतो से जितना दूर रहे उतना अच्छा।

पिछले वर्षों में देखने में आता है की खदानों में राख व दूसरे कारखानों जैसे स्टील प्लांट, तांबा, जिंक एलुमिनियम प्लांट एवं अन्य धातुओं के अवशिष्टों को खदान में भरे जाने की एवं नदियों में चोरी छुपे बहाने की बाते स्थानीय लोंगो की वात कहें क्या राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय माध्यमों समाचार माध्यमों में लगातार आती रही है, जो प्रदूषण नियंत्रण कार्यालयों/ट्रिब्यूनल में व्याप्त अँधापन, भ्रष्टाचार या खतरनाक लापरवाहियों की और इशारा भी करती है, बैसे यह एक आत्मघाती कार्य कहा जा सकता है।

खदान से निकले कोयले की राख एवं दूसरे कारखानों जैसे स्टील प्लांट, तांबा, जिंक एलुमिनियम प्लांट एवं अन्य धातुओं के अवशिष्टों के सुरक्षित निष्पादन पर बृहत् सवांद एवं सहमती जरूरी है जो मौजूदा व्यवस्था में अब तक लचीले साबित हुए सिर्फ संसद एवं न्यालालयों के भरोसे नहीं छोड़ी जा सकती, बृहत् सवांद एवं सहमती आज के लिये भी जरुरी है और आने वाले पीढ़ियों के लियें भी ।***

खुला पत्र -17

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, शुद्ध वायु, शुद्ध जल एवं साफ जमीन के सन्दर्भ में:

भारत में वर्ष दो हजार उन्नीस की गर्मियां चुनाव की चर्चा में निकल गयी व वर्ष वर्ष दो हजार बीस कोरोना में और हर वर्ष की तरह यह बात फिर किसी कोने में दब गयी कि वर्ष दो हजार उन्नीस में करीब सौ गाँव पानी की समस्या के कारण खाली हो गये थे और चेन्नई जहाँ कुछ वर्ष पहले बाढ़ से तबाही हुई थी वहां गर्मी के शुरुवात में ही पीने योग्य पानी खत्म हो गया और अनुमान है कि पूना जैसे अधिकांश शहरों में आने वाले वर्षों में देश एवं दुनिया में काफी परेशानी होने वाली है।

मौजूदा स्वदेशी का नारा, नीति-NITI आयोग (National Institute of Transforming India) और नोकरशाही ने देश को बाहर से अच्छा लेकिन अंदर से परेशानियों का सबब (मुहरा) बने रहने व इसमे बढ़ोतरी कराने में कोई कसर नही छोड़ी है - आज जबकी सूचनाएं भरी पड़ी है- तथाकथित ज्ञान की नदियों वह रही है, समस्याएं-तन-मन की वातों से, ऑन लाइन-ऑफ़ लाइन भाषणो से एवं कंप्यूटर से दूर हो रही है- जमीन पर यह समझ में ही नहीं आता है की समस्या है तो कहाँ वताये, किसे बताये?, विशेषता है तो किसे दिखाए?-सांसद, विधायक, सरपंच या-तहसीलदार, कलेक्टर, मंत्री, मुख्य-मंत्री या प्रधान मंत्री, मंदिर मस्जिद, चर्च या गुरुद्वारा?

चुनाव इस बावत होता है की जनता कि सरकार है लेकिन न्याय से लेकर नैया पार लगाते या डुबाते हुए परदे पर एवं हकीकत में सरकारी नौकर ही दिखाई देते है।

जरूरत है- स्वदेशी के साथ-स्थानीयता की, जरूरत है नौकर, नौकर रहे और मालिक-मालिक, जरुरत है लोकतंत्र में जनता की भागीदारी वोट देने के अतिरिक्त अधिक से अधिक हो ।***

खुला पत्र - 18

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल एवं इनसे जुड़ी हुई आर्थिक नीतियाँ के सन्दर्भ में:

पढ़ा/सुना था कि विदेशी व्यापारी, काली मिर्च को भारत से सोने के बदले खरीद कर ले जाते थे-और इसके बाद भी विदेशी व्यापारियों ने काली मिर्च को बेचकर मुनाफा कमाया था- इसके उलट जंगलों से सटे हुए नगरों में यह आम सुनने में आता है की व्यापारी वर्ग, आदिवासियों के द्वारा जंगलों से लाये गये उत्पाद का बहुत कम मूल्य देते है-सौ रूपए की चीज़ को दस रूपए में खरीदने की कोशिश करते है| जैसे चिरौंजी को नमक के वजन के बराबरी से खरीदना (व्यापारी वर्ग, द्वारा आदिवासियों के शोषणों की तमाम वातें सरकार के स्वम् के सर्वे में भी साठ प्रतिशत लोंगों ने कही है)।

सरकार के सर्वे में करीब सत्तर प्रतिशत लोगों ने कहा की लकड़ी के अलावा आदिवासियों के द्वारा लायी हुयी किसी भी अन्य वस्तु का ठीक दाम नही मिलता जो उचित कहा जा सकता, इसलिए अधिकांशतः वन विभाग जो पेड़ काटना चाहता है कि इन पेड़ों की उम्र हो गयी-आदिवासी उन पेड़ों को वन विभाग से थोडा पहले काटने को मजबूर हो जाते है।

शुद्ध हवा व शुद्ध जल चाहिए तो जंगल और आदिवासियों को बचाना होगा, और आदिवासियों के लिये ऐसे केंद्र खोलने ही होंगे जो बिना पैसे के वस्तुएं बदलने का कार्य बिना किसी शोषण, धोकाधड़ी और लूटपाट के करे।

आर्थिक परिस्तिथियों के सन्दर्भ में आदिवासी क्षेत्र में आज भी यह चलन बचा हुआ है कि सामान के बदले सामान मिल जाये तो अच्छा है, आखिर हर चीज़ को खरदीने या बेचने के लिये एक तीसरी वस्तु यानि रूपए-पैसे या सोना-चाँदी, डॉलर -पोंड क्यों चाहिए?

क्या वस्तुओं को आपस में बदलने की दर नही हो सकती- क्या रूपए-पैसे या सोना चाँदी में व्यापार करना ठीक वैसी ही दादागिरी नहीं है जैसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर डालर, यूरो, पौंड, येन की है या लन्दन मेटल एक्सचेंज की है।

आज जब विश्व में नियो क्लासिकल इकोनॉमिक्स थ्योरी सहित सभी आर्थिक नीतियाँ असफल हो चुकी है तब शायद सबसे प्राचीनतम आर्थिक व्यवस्था "अदला-बदली (वार्टर सिस्टम) द्वारा वस्तुए के विनिमय (बदलने) की व्यवस्था" को एक बार फिर से ध्यान देने से देखने की जरूरत है, क्या "अदला-बदली (वार्टर सिस्टम) का उन्नत रूप समाज में एक नयी अर्थ नीति प्रदान कर सकती है।***

खुला पत्र - 19

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, से जुड़ी हुई आर्थिक नीतियों के सन्दर्भ में:

मौजदा भारत सरकार या दुनिया की अन्य सरकारों को अगर दूसरे हिस्से से देखे तो सरकारें व्यापारी और व्यापारियों का साथ देने वाली ही नजर आती है, भारतीय नेतृत्व सत्ता में आने तक भी आम आदमी या सबका साथ-सबका विकास की बात तो करती है लेकिन यथार्थ में व्यापारिक दृष्टिकोण रखती हुई ही नजर आती है, सत्ता में आने के बाद (सत्ता के मुखियाओं का व्यबहार) देखेंगे तो पाएंगे कैसा आम आदमी और कैसा सबका साथ ।

सरकार सबसे बड़े व्यापारी की तरह लगभग सभी खाद्यानों का न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारण करती है और सबसे ज्यादा खाद्यानों को खरीदती है और फिर उन्हें बेचती है। सरकार का खाद्यानों के लिए निर्धारित न्यूनतम समर्थन मूल्य सामान्तयः व्यापारियों के लिये अधिकतम खरीद मूल्य होता है।

सरकारें, जंगली भूमि को खनिज एवं कोयला के लिये आदिवासियों व जंगली जानवरों को बेदखल कर के उपक्रम बनाती है, खुले बाजार में बोली लगा कर व्यापारियों को आबंटित करती है, सार्वजनिक सम्पदा को गिने चुने लोंगों को बेचने का उपक्रम करती है व व्यापार के लिये विदेश यात्रा व समझौते करती नजर आती है।

सरकारें किसानों व अन्य वर्गे की आय दुगनी करने के नाम पर जंगलों को काटकर खेती के लिये पटटे आबंटित करती है और फिर घडियाली आंसू बहाते हुए कभी बाघ, कभी शेर, कभी हाथियों की सुरक्षा-संरक्षा के लिये अख़बारों में विज्ञापन देती है और पूरी तरह से नालायक सिद्ध हुई वन अधिकारिओं की गैंग की सुबिधायें बढ़ाती है। .

जरूरत है भारत सरकार (एवं दुनिया की अन्य सरकारों) को व्यापार से ऊपर उठने की, भारत को भारत वने रहने देने की ताकि आने वाली पीढ़ियों को भी हम याद रहें एक अच्छे इंसान के रूप में अच्छे पूर्वज के रूप में। ***

खुला पत्र - 20

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, शुद्ध वायु, एवं जनता पर लगने वाला आयकर के सन्दर्भ में:

अख़बारों में कई बार मुंबई, दिल्ली एवं अन्य महानगरों की तथाकथित ज्यादा टैक्स देने वाली जनता कहती है की हमारे करों/टैक्स का पैसा हमारे क्षेत्र में ही खर्च होना चाहिए-देश के अन्य पिछड़े–जैसे बिहार, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश या पूर्वोतर के राज्यों में खर्च नही होना चाहिए।

तब जबकी भारत, पैरिस प्रोटोकाल (जो प्रदूषण, प्रदूषण नियन्त्रण, शुद्ध हवा की कीमत एवं कार्बन फुट प्रिंट को दर्शाता है) का हस्तक्षरकर्ता है एवं प्रकृति की बात समझता है तब महानगरों के ऐसे विरोध का मतलब सिर्फ इतना ही है जैसे की पैरिस समझौते में सबसे ज्यादा प्रदूषणकर्ता अमेरिका का पैरिस प्रोटोकाल से दूर रहना।

ऐसे राज्य जहाँ कारखाने नहीं है और ऐसे राज्य जहाँ वनक्षेत्र है की भूमिका प्रदूषणकर्ता क्षेत्र-जैसे राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली को जिन्दा रखने जैसी है-और यह यकीनन बिहार, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश या पूर्वोतर के राज्यों पर सिर्फ दया का विषय नही है बल्कि इन राज्यों के हक का भी है, कि दिल्ली जैसे क्षेत्रों के करों का पैसा वनों एवं प्रदूषण मुक्त क्षेत्रों के संरक्षण एवं सम्बर्धन में खर्च किया जाए, और इस तरह के आयकर के पैसे के खर्च की तर्कसंगतता के लिये-प्रत्येक जिला या शहर का कार्बन फुट प्रिंट-और हवा का विशलेषण कर इसकी सूची बनाई जा सकती है। उपरोक्त प्रयास(शहरों के कार्बन फुट प्रिंट-और हवा के विशलेषण की सूची) यकीनन पर्यावरण संरक्षण एवं सवर्धन की दिशा में देश का एक बड़ा कदम होगा।***

खुला पत्र -21

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, आसमानी-बिजली से जीव-जंतु, जानवरों व इंसानो की जान की सुरक्षा के लिए तड़ित चालक (लाइटनिंग अर्रेस्टर) के सन्दर्भ में:

हालांकि धीरे-धीरे धरती पर वारिश कम एवं समुन्द्र में वारिश बढ़ी है, धरती पर शहरीकरण बढ़ा है एवं शहरों में शहरी सुरक्षा, दुनिया में औद्योगीकरण एवं खदानों की संख्या बढ़ी है- इसके साथ ही बढ़ा है आसमानी बिजली कडकने, गिरने - और इससे इंसानों, जानवरों और वृक्षों की मृत्यु ।

सरकारी आंकड़ों से ऐसा भी ज्ञात होता है की जहाँ-जहाँ कोयले के पॉवर प्लांट है लोहे, एलयुमिनियम एवं अन्य धातुओं की खदाने एवं धातुओं को बनाने के कारखाने है वहां बिजली कडकने और आसमानी बिजली गिरने की दर बढ़ी है और इससे असमय मृत्यु की दर भी।

जब घने जंगल और वृक्षों की संख्या ज्यादा थी तब लाइटनिंग अरेस्टर का काम यह वृक्ष करते थे या कहे आसमानी बिजली को अपने ऊपर लेकर जीव-जंतु, जानवरों व इंसानो की जान वचाते थे, यह एक और कारण हो सकता है वृक्षों और जंगलों का घनत्व बढ़ाने का।

आज जब शहरों में सभी प्रमुख प्रतिष्ठानों में तड़ित चालक (लाइटनिंग अर्रेस्टर) लगे है तब सामूहिक निवेदन है की क्यों न जंगलों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में एक-एक दो-दो किलोमीटर पर तड़ित चालक (लाइटनिंग अर्रेस्टर) को बिना किसी भेदभाव के लगा दिया जाए और इसका खर्चा राज्य सरकार कल्याण या आपदा प्रबन्धन से पूरा किया जाय।   यह- आसमानी बिजली गिरने से हो रही असमय मृत्यु को रोकना या काम करना एक जरुरी कदम है।***

खुला पत्र - 22

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, शुद्ध जल, शुद्ध जमीन, शुद्ध वायु, कुएं, तालाब एवं नदियों के सन्दर्भ में:

शुद्ध जल की स्थिति देखे तो कुएं अब लगभग न के बराबर ही बचे है, पास के तालाब हो या पूज्यनीय नदियाँ जैसे गंगा, यमुना, नर्मदा, कृष्णा, कावेरी, गोदावरी एवं सोन हो सभी की सभी प्रदूषित नजर आती है।

सभी जल स्त्रोतों की तलहटी पर कीचड़, सतह पर ब्लू डेविल-जलकुम्भी-अनचाही घास एवं किनारों पर पार्टी या पूजा के फेके हुए अवशेष या नालियों से बहकर आया हुआ कचरा ही नजर आता है।

जब इन सभी की सफाई की बारी आती है तो नारा आता है –"सबका साथ-सबका विकास या स्वच्छ भारत" लेकिन जब पैसा बटने और जल स्त्रोतों पर मालिकाना हक की आती है तो यह सारे के सारे जल स्त्रोत- नगर पालिका, नगर निगम, राज्य सरकार या केंद्र सरकार के हो जाते है, ऐसे में प्रशन यह उठता है कि जनता जल स्त्रोतों को साफ करने में सरकार का सहयोग क्यों दे-और किस हक से सहयोग दे?-क्या सरकारी नौकरों एवं नेताओं के लिये काम करना जनता की जिम्मेवारी है?

अगर जल स्त्रोतों पर एवं अन्य जगह गंदगी दिखाई दे रही है-तब यह साफ जाहिर होता है कि अब तक की व्यवस्था (सरकारें एवं इनका नेतृत्व) सफाई के क्षेत्र में स्थानीय स्तर, से प्रादेशिक स्तर, राष्ट्रीय स्तर, एवं अंतर राष्ट्रीय स्तर पर यूनाइटेड नेशन तक असफल साबित हुई है।

सफाई के क्षेत्र में यदि सामूहिक असफलता, सर्व-विदित हो तब यह जरुरी हो जाता है की जल, जमीन, जंगल पर मालिकाना का हक को लेकर व्यापक सवांद हो एवं सहमती बने कि जल स्त्रोतों पर मालिकाना हक किसका है और इनकी सफाई, सुरक्षा, संरक्षा का जिम्मेवार कौन है?***

खुला पत्र -23

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, शुद्ध जल के प्रबंधन से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में:

जल का संकट घहराता जा रहा है और दुनिया की कई सरकारों ने जल संबर्धन या सशक्तीकरण मंत्रालय बनाये है यह ठीक वैसा ही कदम है जैसे इंग्लैंड ने समाज में अकेलेपन से निपटने के लिए वर्ष दो हजार अठारह में अकेलेपन के लिए एक अलग मंत्रालय वनाया था।

यह देखने योग्य रहेगा कि जल संबर्धन या सशक्तीकरण मंत्रालय क्या काम करता है, लेकिन इतना तो पक्का है की पानी की समस्या है और गंभीर है।
स्थानीय स्तर पर जल संबर्धन या सशक्तीकरण के बारे में विचार विमर्श करने से सामान्यतयः निम्न वातें उभर कर आती है:

1, जमीनी पानी का भी मीटर लगे (चाहे जमीनी पानी का उपयोग व्यक्तिगत हो या सामूहिक या धार्मिक और शासकीय ही क्यों न हो), मुफ्त पानी लोंगो की इज्जत ख़त्म करने या लोंगो को इज्जत करने जैसा है, पानी के उपयोग की कीमत बढ़ाई जाये और पानी का नियंत्रण सरकार की वजाये समाज द्वारा किया जाये और यानी पानी का पैसा भी समाज द्वारा एकत्रित एवं खर्च किया जाये ।

2, नदी के किनारे, सड़कों पर, गांवों और शहरों में जहाँ-जहाँ वर्षा का पानी एकत्रित होता है, वहता है वहां-वहां सामूहिक स्तर पर जमीनी जल संबर्धन इकाई (वाटर हार्वेस्टिंग के लिए सम्प पंप इत्यादि) लगाने के प्रयास हो। घरों में जमीनी जल संबर्धन इकाई का लगाना समस्या और समाधान को टालना जैसा ही है।

3, सफाई (नहाने, कपडा धोने, वर्तन धोने इत्यादि) के लिए रासायनिक पदार्थों की बजाये बायोलॉजिकल अवयवों का प्रोत्साहन जरुरी है, वही जल शोधन संयंत्रों में भी ब्लीचिंग पाउडर,फिटकरी, एवं क्लोरीन या हाइड्रो क्लोरिक एसिड की जगह

बायोलॉजिकल अवयवों के इस्तेमाल के लिए अनुसन्धान को प्रोत्साहन जरुरी है। रसोई घर से निकलने वाले पानी को साफ करने के लिए छोटे छोटे सफाई के जल सयंत्रो का प्रोत्साहन जरुरी है ।

4, खेतो में कुछ अंध-विश्वास जैसे की पत्ते, फसल के वचे हुए डंठल जलने से अच्छी खाद वनती है या आज के युग में जो सरकारी या विदेशी जैविक संवर्धित बीज़ जो देर से पकता है अच्छा ही है पर संबाद करना जरुरी है।

उपरोक्त वातें क्रियान्वन में आये इसके लिए स्थानीय स्तर पर यदि समाज द्वारा ही पर्याप्त अधिकार प्राप्त बुद्धिमत्ता एवं संसाधन केंद्र हो तो आसानी होगी।
हमें स्थानीय स्तर पर समाज में पर्याप्त अधिकार प्राप्त बुद्धिमत्ता एवं संसाधन केंद्र को खोलने/खुलवाने के बारे में कदम बढ़ाने होंगे ।***

खुला पत्र – 24

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल एवं ऊर्जा सुरक्षा के सन्दर्भ में:

एक बृहत् स्तर पर निम्न प्रयोग की आवयशकता है:

1, करीब दस एकड़ जमींन पर सूर्य ऊर्जा के पैनल (सोलर पावर पैनल) लगाए जाएँ और इस इकाई से पांच, दस एवं बीस वर्ष में कितनी विद्युत/ऊर्जा (कैलोरिफिक वैल्यू)मिली का लेखा जोखा रखा जाये।

2, इस दस एकड़ जमींन जिस पर सूर्य ऊर्जा के पैनल लगे है के पास में दस एकड़ जमीन पर बड़े पेड़ लगाए जाएँ और इस पेड़ों की इकाई (पत्ते, शाखाओं, प्रशाखाओं के जलाने से) पांच, दस-बीस वर्ष मेंकितनी- कितनी ऊर्जा (कैलोरिफिक वैल्यू)मिलती है का लेखा जोखा रखा जाये।

3, ऊर्जा उत्पादन के अतिरिक्त वन लगाने से एवं सोलर पैनल लगाने से क्या-क्या प्रभाव पड़ता है - वह पैसे की दृष्टी से क्या होगा का लेखा जोखा रखा जाये।

4, लकड़ी का धुआँ, एल. पी. जी. का धुआं, खदान से निकले कोयले का धुआं, बायो गैस के धुयें से इंसान पर इंसान की आँखों पर, जानवर एवं पर्यावरण पर क्या असर पड़ता है, वह पैसे की दृष्टी से क्या होगा का लेखा जोखा रखा जाये।

उपरोक्त प्रयोग जरुरी है परंपरागत चाल-चलन को देखने-समझने के लिए एवं तुलनात्मक अध्धयन के लिए?, ऐसा ही एक तुलनात्मक अध्धयन खेती/कृषि एवं वनो की उपादेयता के मध्य जरुरी है?***

खुला पत्र - 25

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल एवं सामान्य सुरक्षा के सन्दर्भ में:

'जंगल है, तो मंगल है', 'जल है तो कल है', 'वायु है तो आयु है', 'धरती है तो आधार है' एवं 'आकाश है तो आजादी है ' और 'अग्नि है तो शक्ति है', इनके समन्वय से जीवन है, संसार है और इस समन्वय की गतिशीलता में संतुलित सञ्चालन ही संसार की शाश्वतता सुनिश्चित है।
आज दिसंबर दो हजार बीस में दुनिया पर नजर डालते है तो निम्न पाते है:

अ) समस्यायों के रूप में**:**
1, 'बढ़ती मानव आबादी, घटती अन्य जीव-जन्तुओं की आबादी या संख्या',
2, 'बढ़ती मानवीय आवश्यकता, घटते प्राकृतिक संसाधन,
3, बढ़ती तकनीक एवं तकनीकी (यन्त्र, मंत्र एवं तंत्र - मशीन, सॉफ्टवेयर एवं टेक्नोलॉजी) हस्तक्षेप तथा घटती शारीरिक क्षमता,
4, बढ़ती चाहना, वासना, घटता अनुशासन, परिश्रम, सम्मान,
5, बढ़ती कृतिमता (ढोंग, पाखंड) धूर्तता, बदमाशी एवं घटती जीवंतता, सृजनता सज्जनता,

ब) समाधन के रूप में:
1) तथाकथित शैतान कहते है- पृथवी मौजूदा सात सौ करोड़ इंसानो का बोझ नहीं उठा सकती, कुछ ऐसा उपाय जरुरी है जिससे चार- पांच सौ करोड़ इंसान मर जाये या मार दिए जाएँ और फिर पूरी पृथ्वी पर एक धर्म हो, एक मुद्रा हो, बिना किसी रुकावट के देशों के वीच आवागमन हो यानि एक ही देश जैसी व्यवस्था हो और जाहिर उस पर इन शैतानो का शासन हो।

2) तथाकथित संत कहते है:

मौजूदा समय संक्रमण कल का है, इसके बाद सत्य का युग (सतयुग) आने वाला है, जिसमे पूरी दुनिया एक देश की तरह ही रहेगी, बहुत कम इंसानी आवादी होगी, संसाधानो की कमी नहीं रहेगी और ऐसे दुनिया पर हमारी भगवान/मसीहा/अल्लाह का राज होगा।

समस्याएं गंभीर हो जाती है जब तथाकथित शैतान एवं संत एक ही वात कहते हो। प्रश्न है – 'क्या जीर्णोद्धार, नवीनीकरण, पुनरुत्थान एवं पुनर्स्थापना की सम्भावना विना युद्ध और विनाश के सम्भव नहीं है' ? अंतर-राष्ट्रीय स्तर पर शीर्ष नेताओं का विना लालच, डर के सामूहिक भविष्य के लिए सम्बाद जरुरी है। ***

खुला पत्र - 26

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, समाज में व्याप्त समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में: -

1, समाज में समस्याएं तथाकथित संतों एवं शैतानों की अतियों के कारण भी है, संतों एवं शैतानों की कोई सीमा नहीं होती, यह समाज को कई बार अपना खिलौना या प्रयोगशाला मानने लगते है और यही से परेशानी होती है, आम जनता का काम प्रभु से प्रार्थना करना है की वह संतों एवं शैतानों को नियंत्रण में रखे, यह कैसे होगा कहना कठिन है लेकिन प्रार्थना तो हम सब कर ही सकते है शायद संतों एवं शैतानों के मध्य मंथन से संसार के लिए कोई रास्ता निकले।

2, भारत और अन्य लोकतांत्रिक राष्ट्र इसलिए परेशान है कि इन सभी जगहों पर जनता से सारे अधिकार भी और कर्तव्य भी परोक्ष और अपरोक्ष रूप से छीन लिए गए हैं और यह जनता में से ही किसी को जो उनका प्रतिनिधि है उनको दे दिया जाता है, इसलिए जनता आपस में लड़ती रहती है और परेशान रहती है। लोकतंत्र में, जनता ही जनता पर चढ़ी रहती है, जनता ही जनता पर शासन करती है और अभी तो यह प्रतिनिधि लोकतंत्र है, सीधा सीधा लोकतंत्र है भी नहीं।

भारत और अन्य लोकतांत्रिक राष्ट्रों में परोक्ष रूप से नौकरों का ही राज्य है। और नौकरों के साथ परेशानी यह होती है कि अगर मालिक नहीं है तो एक तो नौकर काम ही नहीं करता, यदि करता भी है तो ढंग से काम नहीं करता, नौकरों का लालची होना स्वाभाविक है इसलिए वेतन के अतिरिक्त फायदे पर उसकी हमेशा निगाह रहती है, और यदि मालिक लम्बे समय तक नजर न आये तो मालिक से बड़ा मालिक खुद ही बन बैठेगा।

जब नौकर मालिक की तरह व्यवहार करने लगता है और मालिक अपनी उधेड़बुन में लगा रहता है तो घर के अन्य सदस्यों को अपने ही घर में मौहताजी में आना बहुत

आसान कार्य हो जाता है, आज भारत सहित अधिकांश लोकतान्त्रिक देशों की ऐसी ही दशा है।

जरूरत है लोकतंत्र वाकई में कायम हो, जनता की शासन में अपरोक्ष नहीं परोक्ष भागीदारी हो और प्रारंभिक तौर पर कलेक्टर कार्यालय में सांसद एवं तहसीलदार कार्यालय में विधायक को बिठाया जाए और उसके बाद इसी हिसाब से विधायक सांसद को कार्यपालिका के अधिकार देने की जरूरत है| भारत और अन्य लोकतांत्रिक राष्ट्रों की बेहतरी के लिए हमें हमारे प्रयास इस और करने ही होंगे|***

खुला पत्र – 27

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, समाज में व्याप्त समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में:

असहयोग आंदोलन आजादी के आंदोलनों में लगभग अंतिम आंदोलन था, आजादी मिली, जो आज भी दिल्ली के लाल किले, संसद और विधानसभा में दिखाई देती है, लेकिन इसके साथ ही दिखती है बिना किसी परिवर्तन के वही अलोकतांत्रिक व्यवस्था जो अंग्रेजों द्वारा उन्नीस सौ पैंतीस में शुरू की गयी थी।

हालांकि कहने को गोरों के प्रशासन की तरह का जनता पर अत्याचार कम हुआ है लेकिन उसी तरह का कदाचार, अनाचार एवं भ्रष्टाचार आज भी जारी है जो विना किसी तकलीफ के कोई भी आराम से पुलिस स्टेशन, नगर प्रबंधन के कार्यालयों एवं न्यायालयों में देख सकता है, इसलिए आम जनता ने लाल किले, संसद, विधानसभा में आश्वस्तता तो दिखाई है और सरकार से असहयोग बंद कर दिया लेकिन जनता ने आज भी सरकारों (केंद्र की हो राज्यों की) से सहयोग प्रारंभ नहीं किया।

मंदिरों में नारा लगता है- अधर्म का नाश हो, धर्म की जय हो, प्राणियों में सदभावना बड़े, विश्व का कल्याण हो- भारत की राजनीति अभी आधी लाइन ही सीख पायी है अधर्म का नाश हो-अंग्रेजो का नाश हो, भारतीय राजनीती अभी आगे नहीं सीख पायी है कि, भारत की जनता का कल्याण हो।

आज भी प्रशासन अगर रिश्वत मांगती है, परेशान करती है तो विधायक या सांसद को बताने से बहुत ज्यादा फायदा नहीं होता और बहुत जगह तो विधायक और सांसद भी अगर अकेले हैं तो अपनी पहचान क्यों बताएं तो खुद भी छोटे-मोटे अनाचार के शिकार भी अमूमन होते रहते हैं और फिर यह विधायक या सांसद व्यवस्था के नाम पर मन मसोसकर रह जाते हैं।

ऐसे माहौल में यदि प्रधानमंत्री के खुद कहने और लगातार पीछे पड़े रहने के छः-सात वर्ष के बाद भी जो हाल सफाई का है तो यह देश की जनता के लिए कोई बड़ी वात नहीं है और जनता आकलन लगा लेती है की यदि सफाई का प्रधानमंत्री के खुद कहने और लगातार पीछे पड़े रहने के बाद यह हाल है तो दूसरे अन्य प्रोग्रामों का भी यही होगा या हो रहा है , चाहे वह जल संवर्धन का हो जंगल काटने से रोकने का हो या कोई और हो।

यहां एक बात और भी ध्यान में देने योग्य है कि जब भी प्रधानमंत्री या मुख्यमंत्री के द्वारा जारी प्रोग्राम सफल होते नहीं दिखाई पड़ते तब प्रशासन बड़ी सहानुभूति के साथ यह बात दोहराती है कि जनता बिना डंडे एवं दंड के नहीं मानती-(भय विन होये न प्रीत गोसाईं) और इस तरह पुलिस स्टेशन, नगर प्रबंधन एवं न्यायालय अपनी पकड़ मजबूत करने की कोशिश करती रहती है और आम जनता में यह समझ पहुँच जाती है कि लोकतंत्र- सरकारी नौकरों का, नौकर के लिए नौकरों द्वारा | भगवान भारत और भारत जैसे लोकतांत्रिक देशों को अपना आशीर्वाद दे:

खुला पत्र - 28

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, ग्रामीण एवं शहरी नगर विन्यास से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में: -

भारतीय परिवेश में यदि शहरी नगर विन्यास (टाउन एंड कंट्री प्लानिंग) को देखा जाए तो ऐसा प्रतीत होता है कि पिछ्ले बहुत वर्षों में भुनेश्वर, चंडीगढ़, गांधीनगर और भारत सरकार के उपक्रमों (पब्लिक सेक्टर) की कालोनियां के अलावा योजनाबद्ध तरीके से कुछ बसा ही नहीं है |

स्वतंत्रता के पहले अंग्रेजों द्वारा नई दिल्ली में लुटियन टाउन और उसके पहले मुगल काल में बहुत थोड़े से नगर जैसे फतेहपुर सीकरी व जयपुर, इसके अतिरिक्त बाकी पूरा का पूरा शहरी भारत कुछ किलों, महलों एवं आलीशान भवनों के इर्द -गिर्द मशरूम की तरह फैला और बिखरा हुआ ही नजर आता है।

ग्रामीण एवं शहरी नगरों को इस मशरूम की तरह बिखरे हुए होने के कारण गाओं एवं शहरों में जितनी भी समस्याएं हो सकती है वह सब विराजमान है, चाहे वह मानव के शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य की हो या चाहे वह प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग एवं दुरुपयोग की हो। जो पुराने नगर है वहां हालत इतने ख़राब है की घरों में गर्मियों के दिनों में धुप एवं आंधियों में भी मुश्किल से हवा आती है , अलबत्ता अड़ोस -पड़ोस के रसोई घरों में क्या पक रहा है यह जरूर पता चलता है।

एक सही अनुपातिक- जल, जमीन, जंगल और शुद्ध जल, शुद्ध वायु व जनता का खुला दिल- दिमाग रखने के लिए यह आवश्यक होगा की मौजूदा नगरों में वर्तमान में चल रहे निर्माण कार्यों पर शुरुवात में पूर्ण पाबंदी (अस्थाई व्यवस्थाओं को छोड़कर) लगे, स्थानीय स्तरों की समस्यायों को ध्यान में रखते हुए, पहले बहुमंजिला इमारतों (पच्चीस-तीस मंजिला)का निर्माण हो, तत्पश्चात स्थानीय लोगों को उनमे जगह दी जाये , उसके पश्चात मौजूदा मशरूम की तरह फैले बिन्यास को तोडा जाये फिर उस जगह पार्क, छोटा घना जंगल या नागरिकों की अन्य सुविधाओं का निर्माण हो, जहाँ

तक इन कार्यों के लिए पैसे की व्यवस्था का है तो वह गरीबी उन्मूलन कार्य की राशि से एवं पच्चीस-तीस के कर्ज पर एकत्रित एवं खर्च की जा सकती है।

सही तरह के दिखने वाले देश भारत के लिए ग्रामों, नगरों एवं महानगरों में उपरोक्त विध्वंश एवं निर्माण कार्य आवश्यक है ।***

खुला पत्र -29

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, शुद्ध हवा, शुद्ध जल एवं साफ जमीन से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में: -

शुद्ध हवा, शुद्ध जल का भरोसा जंगलो से आता है, शुद्ध भोजन का भरोसा ग्रामों से आता है और इसके कुशल, सकुशल एवं सुरक्षित सञ्चालन का भरोसा शहरों से आता है।

देखने में आता है कि, जंगल, जंगल की तरह नहीं रहे, सड़क किनारे से तो पेड़ दीखते है लेकिन थोड़ा सा अंदर जाते ही पेड़ों का झुरमुट और खाली मैदान ही दिखता है, भारत जैसे प्राचीनतम देश में चालीस-पचास साल पुराने वृक्ष भी गिनती के मिलते है, तो सौ-दो सौ चार सौ वर्षो के वृक्षों की क्या कहें ऐसे में शुद्ध हवा, शुद्ध जल का भरोसा कैसे आएगा?

खेत क्या है, ग्राम क्या है, इसकी परिभाषा ही सुनिश्चित नहीं है, क्या खेत, वृक्ष विहीन उपजाऊ जमीन ही है, क्या ग्राम लोगों का बड़ा कुनवा है। जिन्हें इतिहासकार कल तक ग्राम कहते थे वह आज बड़ी सी भीड़ का रिहायसी इलाका भर लगता है व कल तक जो लोगो का कुनवा या विदेशी आक्रांताओं से वचने के लिए जंगलों में ठिकाना था वह आज तीन- चार पीडियों बाद तीन- चार सौ लोगों की रिहायश नजर आने लगा है, क्या यह ग्राम कहा जा सकता है ? शहर क्या है, क्या पांच दस लाख लोगो की अनियंत्रित भीड़ वाला रिहायसी इलाका शहर- नगर या महानगर कहा जा सकता है ?

हमें जंगलो, खेतों, ग्रामों, नगरों एवं महानगरों की मूल परिभाषा भी सुनिश्चित करनी होगी इसके पश्चात ही एक व्यवस्थित व्यवस्था बन सकती है जो हमें शुद्ध हवा, शुद्ध जल, शुद्ध भोजन और इसके कुशल, सकुशल एवं सुरक्षित सञ्चालन की गारंटी व भरोसा दे सकता है।***

खुला पत्र - 30

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, जैव वैविध्य या पर्यावरण में विविधता से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में: -

शुद्ध जल, शुद्ध वायु एवं संतुलित भोजन के लिए जैव वैविध्य आवश्यक है एवं जैव वैविध्य या पर्यावरण में विविधता बनी रहे के लिए आवश्यक है की न ही किसी जाती-प्रजाति का अत्याधिक दोहन हो, ना कटाई हो, ना हत्या हो और ना ही किसी को अति प्रोत्साहन एवं सुरक्षा मिले, जैसे खाद्य सुरक्षा के नाम पर गेहूं, चावल, चना, मटर, अरहर, मूंग, मसूर के अतरिक्त लगभग सभी अन्य खाद्यानो की जाती-प्रजाति ख़त्म हो गयी ।

इस तथ्य के निगरानी बनी रहे कि पर्यावरण में विविधता पहले कितनी थी और आज कितनी है और जैव वैविध्य को ध्यान में रखते हुए पर्यावरण में कितनी विविधता होनी चाहिए।

जैव वैविध्य को वनाये रखने के लिए एक ऐसे क्रियान्वयन से इन्कार नहीं किया जा सकता जो देश में नागरिकों के जन्म एवं मृत्यु प्रमाण पत्र, आधार कार्ड, राशन कार्ड, पैन कार्ड के लिए है ।

वृक्षों, पौधों, झाड़ियों, पशुओं की संख्या एवं प्रकारों की गणना, उनकी उम्र, उनका आकार और संक्षिप्त जानकारी एवं उस पर निगरानी रखना हमारी आज की सही हालात की जानकारी रखने एवं भविष्य को सुनिश्चित करने के लिए जरूरी है।

इस कार्य पर स्थानीय से अंतरराष्ट्रीय स्तरों के कार्यक्रम जरूरी है जो गूगल या विकीपीडिया के डेटाबेस जैसा ही हो सकता है, लेकिन इसमें यह ध्यान रखना जरुरी होगा की जानकारी की अधिकता से जरूरी चीजों को नजर अंदाज ना हो जाएँ |***

खुला पत्र - 31

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, जंगलों के नियम से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में: -

देश के भीतर से तो हम एक मजबूत, जागृत, समृद्ध एवं सुसंस्कृत भारत का सपना देखते हैं लेकिन देश के बाहर के बड़े-बड़े निगम/कॉरपोरेट, बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ भारत की सरकार को अपंग, मजबूर, व्यापारियों की कठपुतली वनाये रखने के लिए कार्य करते रहते है एवं यही वैश्विक व्यापारिक शक्तियां भारत देश को इंग्लैंड के उपनिवेश के स्थान पर एक नए उपनिवेशवाद (Neo-colonialism) की परिकल्पना में जकड़े रखने के लिए प्रयासरत दिखाई देती है।

इन तमाम कॉरपोरेट, बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ की कोशिश रहती है कि देश की अधिकांश जनता-खैनी, सिगरेट, चाय, कॉफ़ी शराब, कैप्सूल एवं सेक्स के नशे में डूबी रहे और यह तमाम बड़े व्यापारिक घराने (कॉरपोरेट हाउस) व बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अपने हित साधते रहे, इस कार्य के लिए ये कॉरपोरेट सभी समाचार माध्यमों पर पूरी पकड़ रखने के लिए समाचार माध्यमों में पैसे निवेश करते है और इस तरह जनता को लाचार, मजबूर, कमजोर एवं शर्मसार करने एवं वनाये रखने के लिए पूरा प्रयास करते है जिससे जनता इन्हे सही समझे , इनका विरोध न करे और विरोध करने की सोचे भी तो विरोध करने की ताकत इनमे न रहे।

ऐसे में भारत में जो मौजूदा सरकार है जो राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सौ वर्षों (उन्नीस सौ चौबीस से) के प्रयासों पर भरोसा करते हुए जनता ने बनवाई है उसका (राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ) अपने भविष्य को बचाए रखने के लिए एक ही तरीका हो सकता है कि वह अपनी देश की प्रकृति बचा ले, बे-गैरत, बेकार साबित हुए जंगलों के नियम और उनके अधिकारियों-नौकरों को हटा/त्याग कर वन अधिनियमों को किनारे कर के

जंगल, जनता के लिए खुला छोड़ दे।जंगल है तो शुद्ध हवा, शुद्ध जल और जीने के लिए सब कुछ है।

कहते है असहयोग आंदोलन से स्वतंत्रता आई लेकिन इतना पक्का है कि आंदोलनों से नहीं वरन सहयोगात्मक कार्यों से ही समृद्धि, शक्ति, सामर्थ एवं समरसता आएगी। हमारे लिए एवं आने वाली पीढ़ियों के लिए उपरोक्त प्रयास आवश्यक होंगे।***

खुला पत्र - 32

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, वन अधिकार नियम से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में: -

भारतीय संसद में पारित वन अधिकार नियम की गति या कहे दुर्गति वैसे ही है जैसे देश में अन्य नियमों की है। यदि धूम्रपान नियम या रात्रि में लाउडस्पीकर ना बजाने के नियमों को देखा जाये जो बिना पुलिस एवं न्यायालयों की दखल अंदाजी के भी काफी हद तक चलन में आ गया है तो वह सिर्फ इसलिए की इन दोनों ही नियमों में जनता ही वादी- प्रतिवादी का कार्य करती है जो परस्पर विरोध में खड़े होते है।

धूम्रपान नियमों में धूम्रपान करने वालों को कुछ जगहों पर पूर्ण निषेध है लेकिन हवाई अड्डा जैसे स्थानों पर धूम्रपान के लिए अलग से व्यवस्था भी की गयी है इसलिए यह नियम चल रहे हैं, वहीँ धार्मिक स्थानों पर लाउडस्पीकरों पर प्रतिबंध अभी तक लागू नहीं किया गया है।

धूम्रपान नियम और रात्रि में लाउडस्पीकर ना बजाने के नियमों की तरह ही वन अधिकार नियम के सीमांकन की जरूरत है जो आज ग्लोबल पोजिशनिंग (उपग्रह से सीमांकन) की सुविधा के कारण आसानी से किया जा सकता है। वनों के इस सीमांकन में यह जरूरी होगा कि यह लेखा-जोखा सिर्फ शासकीय कार्यालयों में ही ना रहे बल्कि खुले में (ओपन डोमेन) में भी हो।

इसी तरह ग्रामों और शहरों के मास्टर प्लान भी खुले में-ओपन डोमेन रखे जाने होंगे, इस तरह से वनों, ग्रामों, शहरों के डाटा खुले में रखने से जमीनों में व्याप्त भ्रष्टाचारों की गुंजाइश कम हो जाती है।

आज जब पानी की समस्या, प्रदूषण की समस्या पर सब चिल्ला रहे हैं तब खनिजों के लिए वनों को बेचना, घड़ियाली आंसू वहाने और अपने ही पैर पर कुल्हाड़ी मारने जैसा कार्य होता है।

वन सीमांकन एवं इसका वार्षिक लेखा-जोखा-स्थानीय, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर रखा जाना हमारे जीवन और आने वाली पीढ़ियों के लिए आवश्यक होगा ।***

खुला पत्र - 33

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, बाढ़, बाढ़ से आई विस्थापन एवं बीमारी से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में: -

भारत एवं दुनिया के कई देशों को हर वर्ष सूखे से निपटने उसके एक-दो महीने बाद बाढ़ से निपटने और उसके बाद बाढ़ से आई विस्थापन एयर बीमारी की समस्या से निपटने में लगते है, इन समस्यायों के मध्य में पीने के पानी की किल्लत और सिंचाई के पानी की दिक्कतों की खबरें भी आती ही है, इसके अतिरिक्त कभी कभी कुछ धमाके दर खबरे और कभी योग और योग द्वारा स्वास्थ्य सुधार की खबरें भी सुनने में आती हैं।

इस संबंध में एक परिचर्चा में एक महत्वपूर्ण व्यक्ति ने तीन सुझाव दिए:
1). जिस तरह से देशवासियों ने स्वच्छता को एक जन आंदोलन का रूप दे दिया है, ठीक वैसे ही जल संरक्षण के लिए एक आंदोलन की शुरुआत करनी चाहिए|
2). देश में पानी के संरक्षण के लिए कई पारंपरिक तौर तरीके सदियों से उपयोग में लाए जा रहे हैं, जल संरक्षण के उन पारंपरिक तरीकों को लोग एक दूसरे से साझा करें।
3). यदि आप जल संरक्षण पर काम करने वाले किसी व्यक्ति या गैर सरकारी संगठन के बारे में जानते हैं तो लोगों को उसके बारे में बताएं एवं यह जानकारी Janshakti4jalshakti के साथ भी साझा करें ताकि देश में उनका एक डेटाबेस बनाया जा सके।

इस संबंध में सीधे-सीधे कुछ प्रश्न उभर कर आते हैं जिनके उत्तर और उन उत्तरों पर परिचर्चा ही सही और लंबे समय के लिए समाधान दे पायेगी ।
1. क्या योग से देश में स्वास्थ्य सुधार हुआ, क्या योग के कारण प्रति व्यक्ति स्वास्थ्य पर खर्चा कम हुआ?

2. क्या वाकई में सफाई हुई और दिखाई देती है, क्या सफाई आदत बदलने से हुई या सरकारी महकमे के डर से या यह मीडिया प्रबंधन के द्वारा प्राप्त हुई?
3. क्या आंदोलनों से वाकई में कुछ होता है, आंदोलन आँधियों की तरह आते है और विरानीयत छोड़ जाते है?
4. क्या स्वच्छता, जल संवर्धन एवं स्वास्थ्य में सरकार द्वारा संचालित नगरपालिका, नगर-निकाय जिम्मेदार और असफल साबित नहीं हुयी है और इन संस्थाओं को या तो बंद करने या समाज को सौपने का निर्णय भी स्वच्छता, जल संवर्धन एवं स्वास्थ्य में नए कार्यों को शुरू करने के साथ में लेना होगा? ***

खुला पत्र – 34

ध्यानाकर्षण:-जल, जमीन, जंगल एवं पर्याप्त ऊर्जा से जुड़ी हुई समस्याओं, विसंगतियों एवं संभावित समाधानों के संबंध:-

धरती पर सूर्य की रोशनी ऊर्जा/गर्मी मानव सहित सभी प्राणी जगत की ऊर्जा की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति एवं प्रबंधन ही नहीं करता है वरन उससे कई गुना ज्यादा देता है।

कई धर्म कहते हैं, आम इंसान यदि देर रात तक जागेंगे तो बीमार पड़ेंगे, यदि इंसान प्रकृति के विपरीत होंगे, तो वह सुकृति की जगह विकृति नज़र आयेंगे और प्रकृति से दूर होते जायेंगें।

आज कहते है की बिजली बहुत आवश्यक है, ऐसे में यह देखना जरुरी हो जाता है की बिजली बनाने के पहले कारखाने (पावर प्लांट) जो सन उन्नीस सौ दस में अमेरिका में लगा था के आज एक सौ दस वर्षों के बाद भी दुनिया में एवं भारत में सभी जगह बिजली नहीं पहुंची और जहाँ पहुंची भी है वहां पूरे समय तक नहीं रहती और इसके बाद भी इन सब जगह पर जीवन चल रहा है, इसके अतिरिक्त जहाँ-जहां जंगल बचे हुए हैं, आदिवासी बचे हैं वहां स्वास्थय ,शक्ति, सरलता एवं सहृदयता भी बची हुई है।

कहते थे कि 'आवश्यकता आविष्कार की जननी है', लेकिन आज के समय के बहुत सारे व्यापारिक प्रतिष्ठान इस विचार से ऊपर उठ गए हैं और वह कहते है कि अविष्कार हो गया है, हमने पेटेन्ट ले लिया है अब बारी है इस अविष्कार के व्यापार की, इसलिए बाजार में समाज में प्रचार द्वारा आवश्यकताओं को पैदा करो (यदि ऐसा नहीं करेंगें तो हमारा व्यापार कैसे चलेगा), तब यदि बिजली की खोज हो गई है और ऐसे में यदि समाज में बिजली की खपत नहीं होगी तो बड़े-बड़े बिजली घर और बिजली से चलने वाले सामान के कारखाने कैसे चलेंगे ? और इस व्यापारिक सोच के कारण आविष्कार, आवश्यकताओं का जनक/पैदा करने वाला हो गया और अब नारा हो गया है "आवश्यकता आविष्कार की बेटी है" ।

ऐसे में समाज क्या करे?, क्या व्यापारिक प्रतिष्ठानों की कठपुतली बने या इस पर एक बृहद संवाद करे, संवाद पर सहमति बनाये कि बिजली, क्यों, कितनी, कैसे और कहां, जिससे समाज में रोजगार, शारीरिक कार्यों के लिए स्थान वना रहे और और उसी हिसाब से ऊर्जा-बिजली के क्षेत्र में आगे का काम हो|***

खुला पत्र - 35

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, शुद्ध हवा, शुद्ध जल एवं इनके प्रबंधन से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में:

जल के प्राकृतिक प्रवंधनों (समुद्र, बादल, वर्षा, वर्फ, पहाड़, , झरने, नदियां, वृक्ष, जंगल जमींन पर एवं जमींन के अंदर) में मनुष्यों ने कुओं, बाबड़ियों, तालाबों, बांधों और नहरो को जोड़ा है।

पानी को रोकने के लिए वनाये हुए बांधों की व्यवस्था से नदी-नालों का मार्ग परिवर्तित हुआ है जिससे एक और दल-दल बनने और दूसरी और पहाड़ खिसकने की घटनाएं बढ़ रही है।

पानी के जिन बड़े बांधो से बिजली बनती है उनसे सामान्य समय में पानी नहीं छोड़ा से छोड़ा जाता है लेकिन बरसात में यदि बांध भरने लगे तो लाखो-करोड़ो लीटर पानी बिना जान-मॉल की परवाह किये छोड़ दिया जाता है।

भारत में यदि बिहार के सुपौल बांध व केरला के जल विद्युत् वाले बांध के बहाव की घटना से हुए नुकसान को देखे (मौतों को छोड़कर) तो यह बांध से हुए कुल फायदे से बहुत ज्यादा रहा है। देश एवं दुनिया के बाढ़ों की घटनाओं से बांधो से हुए नुकसान का जायजा लगाया जा सकता है।

हैंड पंप एवं ट्यूब वेल से निकलने वाले पानी की बात करे तो वह सभी सीमाओं को पार कर गया है- जिसने धरती के अंदर की नमी लगभग पूरी तरह ख़तम कर दी है, धरती का तापमान बड़ा दिया है, धरती की ठीक वैसी हालत हो गयी जैसे इन्सान की वातावरण के पैंतालीस डिग्री सेंटीग्रेड तापमान के ऊपर होने पर होती है।

जल संसाधन के क्षेत्र में उपरोक्त यह दर्शाता है की नीति-नियामकों के फैसले दूरगामी नहीं थे या कहें कि गलत थे, ऐसे में आज जल प्रबंधन में एक व्यापक संवाद, स्थानीय स्तर से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक जरुरी है, और शायद पहल हमें-भारत को ही करनी होगी।***

खुला पत्र - 36

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल एवं पर्याप्त ऊर्जा के प्रबंधन से जुडी हुई विसगंतियो, समस्याओं एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में: -

ऊर्जा की आवश्यकता तो सूर्य एवं जंगलों की लकड़ी से पूर्ण हो जाती है, लेकिन बिजली के चलन एवं पेट्रोलियम पदार्थों के आगमन के बाद   मशीनीकरण बढ़ा है। घरों, ऑफिसो एवं समाज में मशीनीकरण बढ़ने के कारण विद्युत् एवं पेट्रोलियम क्षेत्रो में माफिया समूहों की दखलंदाजी ज्यादा हो गयी या यों कहे की अब बिजली एवं ऊर्जा के क्षेत्र में माफिया ही है, जैसा की - कोयले से बिजली बनाने वालों का, पेट्रोलियम पदार्थों या गैस से बिजली, वाहन एवं अन्य मशीन बनाने वालों का , पानी से , हवा से, सूर्य से, आणविक बिजली बनाने वालों का, यह सारी विधाएँ किसी न किसी तरह का घातक प्रदूषण करती है या प्रदूषण रोकने वाले वृक्षों का स्थान घेर लेती है।

यह सारे के सारे माफिया एक दूसरे के विरोधी तो है लेकिन ऊर्जा के क्षेत्र में किसी नयी विधा के ना आने देने के प्रयासों में सब एक साथ ही नजर आते है, लेकिन जरुरत है एक ऐसी विधा के प्रोत्साहन की और बड़े पैमाने पर उत्पादन करने एवं प्रयोग में ले आने की, जो न शोर करती हो, न ही प्रदूषण फैलाती हो, और एक ऐसी ही विधा है - रिएक्शन लैस जनरेटर की जो स्वर्गीय श्री परमानन्द तिवारी ने खोजा है ।

स्वर्गीय श्री परमानन्द तिवारी के रिएक्शन लैस जनरेटर की विधा की अन्य जानकारियां tewari.org पर देखी जा सकती है।   यह रिएक्शन लैस जनरेटर, जल, जमीन व जंगल की तमाम समस्यायों को कम करने एवं प्रसन्नता को बढ़ाने के लिए जरुरी समझा जा सकता है।***

खुला पत्र - 37

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल के प्रबंधन से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में: -

जल, जमीन, जंगल, शुद्ध हवा, शुद्ध जल एवं पर्याप्त भोजन के प्रबंधन से जुडी हुई तमाम समस्याएं मानव निर्मित ही है जिनके मूल में कुछ निम्न परिभाषाएं एवं सैद्धांतिक अंतर है :

1, अधिकांश योजनाएं ग्राम/गावं केंद्रित होती है लेकिन ग्राम/गावं किसे कहें यह निश्चित नहीं- अतः योजनाओं का पैसा ऐसे ही या भ्रष्टचार में खर्च हो जाता है।

2. पेड़ो/बृक्षों का मालिकाना हक़ की परिभाषा- जैसे पेड़ जनता लगाए लेकिन काटने के लिए वन विभाग की इजाजत जरुरी है, लेकिन वन बिभाग अपनी मन-मर्जी से जनता के लगाए हुए पेड़ या प्राकृतिक जंगल ही क्यों ना काट ले, वन बिभाग की जनता के प्रति कोई जबाबदारी नहीं।

3, सार्वजनिक पानी के श्रोत कुआँ, बाबड़ी, तालाब, झरना, नदियां किसकी संपत्ति है, जनता की, जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों की या शासकीय नौकरों की। पानी के बहुत कुआँ, बाबड़ी, तालाब ख़त्म हो गए और उसका दोष जनता मड़ दिया गया लेकिन ताज्जुब की बात है मालिक तब भी जनता नहीं है, जिम्मेवारी तय हो और सार्वजनिक सुनवाई होकर नगर पालिकाओं/निगमों को दंड मुकर्रर होना जरुरी है,

4, सत्ता के बहुत सारे केंद्र हो गए है -केंद्र सरकार, राज्य सरकार, सांसद, विधायक, पार्षद, जनपद सरपंच, अफ़सरशाही, न्यायलय इत्यादि लेकिन उनमे आपस में जिम्मेवारी व जबाबदेही का कोई ठीक ठीक बिभाजन नहीं होना, और ताज्जुब की बात इसमें जनता कही है ही नहीं, जिसके नाम पर लोकतंत्र में सब खेल होता है ।

5, न्यायलय में आप अपनी वाते खुद नहीं कह सकते है, न्यायालय जबाबदारियों के ऊपर हो गया।

6, जुबानी जमा खर्च एवं लिखने के कार्यों की अधिकता हो गयी है- हाथ-पैर एवं पूरे दिल-दिमाग से काम करने की कमी हो गयी है और इनके मेहनताने में भी काफी अंतर आया है।

7. भारत देश में इतने चुनाव होते है की यह नारा भी लाने की जरुरत हुई 'एक देश एक चुनाव', प्रश्न यह है की सत्ता के केंद्र प्रधान मंत्री, मुख्य मंत्री, सांसद, विधायक, पार्षद, मुखिया इत्यादि है या पी. एम., सी.एम., डी.एम., कार्य पालिका, न्यायपालिका, मीडिया और व्यापारी वर्ग है, इसमें जनता वोट देने के आलावा कहाँ है ।

8. समाज एवं सरकार में बिभिन्न कार्यों में कार्यरत लोंगो की न्यूनतम उम्र, अधिकतम उम्र, न्यूनतम वेतन व अधिकतम आय क्या हो यह निश्चित ही नहीं है, ग्रामों एवं नगरों में एक प्रमुख (ओम्बड्समैन) जैसी कोई सुबिधा है ही नहीं, जहाँ जा कर कोई ग्राम/नगर से सम्बंधित शोषण, सुरक्षा की शिकायत कर सके या सामान चोरी हो जाने पर मदद की गुहार लगा सके ।

ग्रामों एवं नगरों में एक प्रमुख (ओम्बड्समैन) एवं राज्य सभा जैसी हर समय उपलब्ध रहने वाली समिति जो वरिष्ठ नागरिको के बीच से चयन (चुनाव नहीं) द्वारा बनायीं गयी हो की जरुरत है।   इसके साथ ही विधायक से निचले स्तर के सभी चुनावो को खत्म करने की तो अविलम्ब जरुरत है ही क्योंकि आज के दिन में समस्या देश में अच्छे नेताओं के न होने के साथ साथ ज्यादा संख्या में नेताओं के होने की भी है।

उपरोक्त सभी विषयों पर संबाद जरुरी है ताकि देश के ग्रामों एवं नगरों में जीवंतता, गतिशीलता एवं समरसता बनी रहे ।***

खुला पत्र – 38

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, शुद्ध हवा, शुद्ध जल एवं साफ जमीन का चाय, कॉफी और चॉकलेट से संबंध, इस विषय में निवेदन:

ब्रिटेन, स्पेन एवं फ्रांस के अधिकांश दुनिया पर शासन और आधुनिक औद्योगिक क्रांति के बाद के परिदृश्य को देखेगें तो जल, जमीन एवं वायु के प्रदूषण को एक बड़ी समस्या के रूप में पाएंगे।

पर्यावरण में प्रदूषण की समस्या के मूल में बिजली एवं पेट्रोल की खोज एवं इनका अत्यधिक उपयोग तथा चाय, कॉफी और चॉकलेट का अत्यधिक चलन दिखाई देता है।

बिजली और पेट्रोल से पर्यावरण में जो परिवर्तन आया उस पर तो अधिकांश लोंगो की नजर है लेकिन चाय, कॉफी एवं चॉकलेट से पर्यावरण में कितनी समस्या आई है कितना बोझ पड़ा है इस पर काम लोंगो की ही नजर है लेकिन चाय, कॉफी एवं चॉकलेट से पर्यावरण में कितना प्रदूषण बड़ा है इसका आकलन करने से ही हमारी आंखें खुलेंगी और शायद यह स्पष्ट होगा की हमें आगे क्या करना है।

सिर्फ चाय एवं कॉफी के आकलन में हम पाएंगे कि, भारत की एक सौ तीस करोड़ जनता में करीब अस्सी प्रतिशत जनता कम से कम दिन में दो बार चाय या काफी (सौ ग्राम चाय या कॉफी) का सेवन करती है, जिसमे करीब पच्चीस ग्राम दूध, दस ग्राम चीनी एवं ढाई ग्राम चाय पत्ती, ईंधन, अतिरिक्त अदरक, इलायची, दालचीनी भी लगती है।

भारत में चाय या कॉफ़ी में खर्च होने वाले सामान को यदि वार्षिक रूप से देखा जाये तो यह करीब तीन सौ पैसठ करोड़ टन दूध , सत्तर करोड़ टन चीनी एवं बीस करोड़ टन चाय पत्ती/कॉफी लगेगी जिसको पैदा करने के लिए गायों की एक बड़ी सँख्या, गायों

के लिए चारागाह, चीनी के लिए गन्ने के खेत, चाय कॉफ़ी के बागान इसके अतिरिक्त अदरक, इलायची, दालचीनी के लिए जमीन लगेगी जो करीब देश की सबसे उपजाऊ भूमि का करीब तीस से चालीस प्रतिशत बैठता है, यह वह इलाका है जहां पहले घने जंगल थे और पर्यावरण को शुद्ध हवा देते थे व जल संग्रहण करते थे ।

हाँ चाय, कॉफी और चॉकलेट के प्रयोग से अधिकांश डॉक्टरों और कुछ व्यापारियों को जरूर फायदा हुआ है, लेकिन हमें देखना होगा कि जल, जमीन, जंगल में सामंजस्य/समन्वय कैसे वना रहता है |***

खुला पत्र - 39

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, रिहायसी इलाकों में व्यापारिक दृष्टि से खरीदी लेकिन खाली पड़ी हुयी जमीन के समाज द्वारा प्रबंधन के संबंध में:

1, अधिकांश ग्राम, नगर, शहर एवं महानगरों के रिहायसी इलाकों में यह देखा गया है की लोग व्यापारिक दृष्टि से जमीन खरीद कर रख लेते है लेकिन उस पर निर्माण कार्य नहीं कराते, ऐसी खाली पड़ी हुयी जमीनें, कूड़ाघर, मच्छरों को पनपने की जगह और राह चलते हुए लोगों के लिए बाथरूम का काम करता है- जो कभी भी सराहनीय सामाजिक एवं रिहायसी व्यवस्था नहीं कही जा सकती।

इन जगहों को सार्वजनिक रूप से पड़ोसियों द्वारा साफ-सफाई रखने व पर्यावरणीय कार्यों जैसे पेड़ लगाना, सब्जी उगाना या पार्क बनाना, आदि कार्यों में लेने की व्यवस्था करना आज जरुरी कदम लगता है ।

2, कई ग्राम, नगर, शहर एवं महानगरों में यह भी देखा गया है की लोग अपने घर के आगे पेड़ लगा कर जमीन पर कब्ज़ा करते है एवं समाज को परेशान करते है, परिवहन को बाधित कर प्रदूषण बढ़ाते में मदद करते है।

3, कई शासकीय या गैर शासकीय संस्थान जो सुबिधा मुहैया कराने के क्षेत्र में लगे है, कभी अपनी गैस की या पानी की पाइप लाइन, कभी बिजली की केबल व खम्बे, सीवर का पाइप, टेलीफोन की तारे ऐसे लगा जायेंगे जिससे सडकों पर स्वतः ही अतिक्रमण हो जाये, ऐसी संस्थाओं से कैसे पेश आना है, इनकी लापरवाहियों पर कैसे लगाम लगाना है, यह विचारणीय लगता है।

इन संस्थाओं, इन जगहों पर सार्वजनिक रूप से पड़ोसियों द्वारा आर्थिक दंड बसूलना या जमींन को अस्थायी रूप से अधिग्रहण करके इस आय को सफाई रखने व पर्यावरणीय कार्यों जैसे पेड़ लगाना, सब्जी उगाना या पार्क बनाना आदि में खर्च करने की व्यवस्था करना एक जरुरी कदम लगता है। इस पर संबाद एवं सहमति विचारणीय है।

खुला पत्र-40

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, लोकलुभावन लोकतंत्र में शासन-प्रशासन के ढाँचे से जुडी हुई विसगंतियो, समस्याओं एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में:

एक जैसी ही समस्याओं को स्थानीय, क्षेत्रीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर होने का एक ही महत्वपूर्ण कारण है की लोकलुभावन लोकतंत्र में जन भागीदारी सिर्फ चुनाव में वोट डालने तक ही सीमित रखी गई है।

लोकलुभावन-लोकतंत्र में जन भागीदारी जो सिर्फ चुनाव में वोट डालने तक ही सीमित रखी गई है के कारण जनता में अपने- गांव, शहर, देश एवं दुनिया के लिए जो एक अपनेपन का बोध होता है वह धीरे-धीरे ख़त्म हुआ है। आज देखे तो एकएक सामान्य नागरिक में यह अपनेपन का बोध लगभग नगण्य ही है।

आज, 'मंत्री, मुख्यमंत्री या प्रधानमंत्री' मंच से कितना भी आवाहन करते रहे लेकिन लोकलुभावन लोकतंत्र ने शासन-प्रशासन का जो ढाँचा बना दिया है वह इन आवाहनों को दरकिनार करने और इन्हे महज चिल्लाहट या तन-मन की बात, भूलने-भुलाने की बात बनाने में समय नहीं लगाती, उदहारण के लिए सफाई है ही, और इस तरह इस लोकलुभावन लोकतंत्र में शासन-प्रशासन में सब कुछ शासकीय नौकरों के भरोसे ही चलता रहता है-न्यायालय भी ।

जरूरत है लोकतंत्र कैसे लोकतंत्र हो, जनता के कदम(फुटप्रिंट) शासन-प्रशासन में कैसे बड़े, समाज के निर्णय में जन-भागीदारी कैसे बड़े, सरकार के निर्णयों के क्रियान्वयन में कैसे आम नागरिक सहयोग करें इस विषय पर स्थानीय, राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय संवाद जरूरी है। और सबसे ज्यादा जरुरी है लोकलुभावन लोकतंत्र में जनभागीदारी बढ़ाने की शुरुआत करने की, चाहे वह एक प्रदेश के एक जिला से ही क्यों न हो, स्थानीय स्तर पर शासन द्वारा मान्य एवं समाज द्वारा संचालित- बुद्धिमत्ता-संसाधन, सूचना सलाह एवं आपदा प्रबंधन केंद्र एक शुरुआत हो सकती है, हमारे यह प्रयास समाज में खुशहाली ला सकते है ।***

खुला पत्र-41

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, जल प्रबंध एवं मल निष्कासन से जुडी हुई समस्याओं, विसगंतियो एवं सम्भावित समाधानों के संबंध में: -

एक जमाना था जब हर गांव में और नगरों में हर रिहायशी इलाकों के साथ जंगल होता ही था, तब लोग शौच के लिए भी जंगलों का प्रयोग करते थे, फिर जनसंख्या बड़ी, लोगों की महत्वाकांक्षा बड़ी और युद्ध हुए जिसके चलते दुनिया के विभिन्न भागों के लोग आपस में मिले, रेगिस्तान के लोग, बर्फीले इलाकों के लोग, पहाड़ियों के लोग, समतल और उपजाऊ जमीन वालों से मिले। जनता में सभी तरह के मिश्रण में शौच एवं नहाने की व्यवस्था में भी मिश्रण हुआ, शौच एवं नहाने के कमरे(बाथरूम) की नई व्यवस्था विकसित हुई, अब हर रिहायशी इलाकों के साथ जंगल नहीं जुड़ा होता लेकिन हर घर में शौचालय जरूर जुड़ा होता-अटैच जंगल से अटैच बाथरूम में यात्रा हुई।

इसी तरह हर रिहायशी इलाकों में कुओं से, तालाबों से, नदियों से जल लेने की व्यवस्था की बजाय अब 'हर घर नल का जल' की व्यवस्था या हेडपंप, ट्यूबवेल की व्यवस्था हो गई है या 'हर घर नल का जल' लाने के प्रयास चल रहे है ।

बहुत पहले भी जल प्रबंध एवं मल निष्कासन (Water supply and sewerage disposal) नगरीय व्यवस्था में एक बड़ी चुनौती था और आज भी यह विषय दुनिया में नगरीय व्यवस्था में बड़ी चुनौती है। यह उन इलाको में जनसँख्या घनत्व ज्यादा है एवं गरीबी है जैसे भारत में बिहार, उत्तरप्रदेश आदि ।

जल प्रबंध एवं मल निष्कासन समस्या के समाधान में देखना यह है कि जमीन को खोखला व सूखा किए बिना तथा तालाबों, बांधो, नदियों, पास के दूसरे रिहायसी इलाके/गाओं को शहरी निकास के गंदे पानी से मिलाये बिना, गन्दा किये बिना, जमीन के अंदर के पानी को प्रदूषित किये बिना-जल एवं मल निष्कासन की क्या व्यवस्था हो सकती है, शायद इस विषय पर पर्याप्त शोध एवं संवाद की आवश्यकता है ।***

खुला पत्र-42

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, शुद्ध हवा, शुद्ध जल, साफ जमीन एवं सामाजिक स्वच्छता व्यवस्था के संबंध में: -

समाज में व्याप्त कुछ कहावतों और चलन को फिर से देखने की जरूरत है:- जैसे 'खाने के पहली रोटी या पहला हिस्सा गाय का और आखरी हिस्सा कुत्ते का होता है', यह कहावत और चलन सिर्फ कहावत या हिंदू धर्म की रीति रिवाज नहीं वरन सामाजिक स्वच्छता व्यवस्था का पारिवारिक नियम रहा है । कालांतर में नगरों के बड़े होने और नगर पालिका, नगर निगमों के आने से मल एवं कचरा निष्कासन (सीवरेज डिस्पोजल) के नए प्रयोगों के बाद आज उपरोक्त सामाजिक स्वच्छता का पारिवारिक नियम एक वर्ग द्वारा अपनाई जाने वाली रीति रिवाज की औपचारिकता की तरह ही रह गया है।

रिहायशी इलाकों में पहले यह व्यवस्था वनी कि खाने का पहला हिस्सा यानी कि सब्जी-फल का छिलका, डंठल, इत्यादि और चावल-दाल का धोवन, खाना बनाने वाले वर्तनो का धोवन (वर्तन मांजने के पहले) गाय-भैंस को दिया जाए और खाने के बाद का बचा हुआ पका हिस्सा कुत्ते-बिल्ली को दिया जाए। प्रातः शौच के लिए घूमते हुए नाले या नदी किनारे या जंगल में जाए तो वह सुअरों के लिए हो जाए इसलिए सुअर शहर के बाहर ही रहते थे | सुअरों की अहमियत ठंडे एवं बर्फीले इलाकों में जहां पदार्थों का विघटन देर से होता है बहुत ज्यादा थी।

जंगल में रहने वाले आदिवासियों के लिए सभी छोटे जानवर भोज्य पदार्थ थे और शहरों में रहने वालों के लिए बहुत सीमित जानवर या मछली ही भोज्य पदार्थ बनी और इस तरह से एक लम्बे समय तक जल, जमीन, जंगल के मध्य सामाजिक स्वच्छता की व्यवस्था बनी रही।

नगर निगमों के कचरा इकट्ठा करने, उसे निष्कासित करने के कारण, जो राजनैतिक रूप से पार्टियों की एक जरूरत है, जैविक खाद बनना और इसका चलन ही लगभग बंद हो गया।

जरूरत है कुछ संस्थायें बंद करने की, जैसे नगर पालिका, नगर निगम, कुछ व्यवस्थाएं पुनः चालू करने की, जरुरत है सफाई कर्मचारियों को उतना ही सम्मान मिले घर में माता-पिता या दादा-दादी छोटे बच्चे के मल-मूत्र की सफाई करते है, उन्हें मिलता है, सफाई कर्मचारियों को मेहनताना, उनके बराबर करने की है जो दिमाग साफ करने का प्रवचन देते है। थोड़े में कहें तो सामाजिक स्वच्छता व्यवस्था के लिए समाज में व्याप्त आपसी संबंधों पर एक संवाद, सहमति की जरूरत है।***

खुला पत्र-43

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, जल की प्राकृतिक व्यवस्था में आयी रुकावटों, व्यबधानों के संबंध में: -

कुछ कहावतें हैं जैसे:

अ). 1) पानी पानी में बरसे, मानुष बूंद बूंद तरसे।

2) रहमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।

पानी गए न ऊबरे मोती, मानुष, चून।।

(चून-चूना, आटा । मोती की चमक, मनुष्य की इज्जत/चमक)

3). जल है तो कल है, जंगल है तो मंगल है, शरीर में जितना जल है उतना ही धरती पर जल ।

4). जल का ना कोई आकार है न कोई प्रकार, जल-जल है।

जल के नीचे धरती और धरती के नीचे जल इत्यादि ।

इनका कहावतों में जो ज्ञान छिपा है वह शायद हम नजरअंदाज कर गए, नहीं तो क्यों-कर पानी अधिक बरसने पर भी हम रोते और बाढ़ जैसी आपदा झेलते, जहां कभी घने जंगल थे वहां जमीन पर और जमीन के नीचे प्रचुर मात्रा में जल था, आज उसी जगह वर्षा में बाढ़ और गर्मी में सूखे की खबरें आती है और बारह महीने रेगिस्तान का प्रतीक-ऊंट दिखाई देता है।

ब) एक गांव में हैंडपंप लगाना था लेकिन गांव के बुजुर्गों ने यह कह कर मना कर दिया कि हम हेड-पंप से पानी निकाल तो लेंगे लेकिन जहाँ से निकाला वहाँ उस साठ फुट, सौ फुट, छः सौ फुट गहरे में पानी वापिस कैसे करेंगे, भरेंगे कैसे। यदि उस गहराई में पानी नहीं भर सके तो वहां एक तो हो सकता है जमींन खोखली हो जाये, फिर वह जमीन धस जाये, और यह ना भी हो तब भी इस तरह से पानी निकलाने और बापिस ना करने के कारण हम अपने बुजुर्गों द्वारा जमा की गयी पानी रूपी पूंजी खत्म कर देंगे और आने वाली पीढ़ियों के लिए खाली स्थान छोड़ जाएंगे।

उन्होंने कहा हमारे लिए कुआँ, तालाब, झरना और इन्हे भरने के लिए वर्षा का जल ही काफी है।

देश एवं दुनिया के वह क्षेत्र जहां नदियों दूसरे क्षेत्र का पानी लाती है वहाँ और भी ज्यादा रहीशी/ऐश्वर्य होने चाहिए, जैसे भारत में बिहार, लेकिन क्षेत्र के अधिकांश जंगल काट देने से, सिर्फ खेती करने से ऐसे क्षेत्र दुर्दशा को प्राप्त होने लगे हैं और प्रकृति ने इन पर तरस खाकर बादलों को समुंद्र में ही बरसने को कह दिया। अब प्रकृति को कोसने और यह कहने कि पानी, पानी में बरसे, मानुष बूंद बूंद तरसे, का क्या प्रयोजन रह जाता है। समय है पुनर्स्थापना का, धर्म संस्थानों का, जंगल का, मंगल का।***

खुला पत्र-44

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, अविश्वास और प्राकृतिक विश्वास के संबंध में:

एक पुरानी कहावत आती है: कि छह दोस्त एक ग्राम से दूसरे ग्राम में पैदल ही जा रहे थे, रास्ते में उन्हें भूख लगी, थोड़ी देर में उन्हें पके हुए फलों से लदा हुआ एक वृक्ष दिखा, यह देखते हैं एक ने कहा इस पेड़ को उखाड़ लेते हैं और फल खाते हैं, दूसरे ने कहा पूरे पेड़ को उखाड़ने की क्या जरूरत है, जमीन से ऊपरी हिस्से को तोड़ लेते हैं, तीसरे ने कहा कि इसकी क्या जरूरत है, जिस शाखा पर फल लगे हो उसे तोड़ लेते हैं, चौथे ने कहा इसकी भी क्या जरूरत है शाखा की जगह सिर्फ उस प्रशाखा जिस पर फल लगे है उसे तोड़ लेते हैं, पाँचवे ने कहा यह सब क्या है, हमें भूख लगी है, फल लगे हैं सिर्फ फल को तोड़ने से काम चल जाएगा, सिर्फ फल तोड़ते हैं।

विचारणीय होगा यदि हम पल भर के लिए सोचे कि छठवें व्यक्ति ने क्या कहा होगा?, छठवें व्यक्ति ने कहा कि जैसे ही हमें भूख लगी थोड़ी देर ही में पके फलों से लदा हुआ वृक्ष हमें दिखा, (जो पहले तो नहीं दिखा था) अब हम वृक्ष के पास आए हैं, थोड़ी देर बैठो, भगवान वृक्ष के द्वारा सबसे पके हुए फल हमें खाने को देगा, वृक्ष भी हमें फल खिलाकर प्रसन्न होगा कि वह भूखे व्यक्तियों के कुछ काम आया और हम भी बेकार की मेहनत से बचेंगे और वृक्ष को परेशान भी नहीं करेंगे ऐसे में वृक्ष और हमारे मध्य एक जीवंत और प्रेम का संबंध भी बनेगा ।

छठे व्यक्ति की बात प्रकृति पर विश्वास की है और यह बात आज हास्यास्पद लगती है, क्योंकि पूरी दुनिया में विश्वास शनै-शनै खत्म हुआ है, अविश्वास पैदा किया गया, प्रोत्साहित किया गया, जो आज दो हजार बीस में कोरोना काल में इतिहास में अब तक के चरम पर है, अन्यथा क्योंकर जंगल कट जाते, कच्चे फलों को तोड़कर कार्बाइड द्वारा पकाए जाते ?

जरूरी है विश्वास को पुनः विश्वास में लेने की, जरुरी है विश्वास की दात्री/जननी प्रकृति को हरा भरा करने की, जागृत करने की।***

खुला पत्र - 45

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, चालाक, चोर, बदमाश, लुटेरे, डाकू, शैतान एवं राक्षस तथा सज्जनों, संतो, शरीफों, महात्माओं एवं देवताओं के संबंध में:

समाज एवं संसार में देखे तो चालाक, चोर, बदमाश, लुटेरे, डाकू, शैतान एवं राक्षस कम मेहनत नहीं करते, यह तबका भी खूब मेहनती व बहुत सृजनशील होता है, यह सब लगन के पक्के, जवान के पक्के, साहसी एवं दूर दृष्टा भी होते हैं, लेकिन इस तबके को हमेशा यह मलाल रहता है कि सज्जनों , संतो, शरीफों, महात्माओं एवं देवताओं को समाज एवं संसार में जो आदर-इज्जत मिलती है वह इन्हे क्यों नहीं मिलती। लोग सज्जन शरीफों एवं संतों को हमसे ज्यादा क्यों समझते हैं जबकि हर काम की, हर नए कार्य की अमूमन शुरुआत हम ही करते हैं,   यह सज्जन, शरीफ, संत आलसी होते हैं, हमारी ही बनाई हुयी चीजों को उपयोग में लेते हैं तब भी इन्हे क्यों ज्यादा इज्जत मिलती है?

कहते हैं इस मलाल-अफसोस की शिकायत लेकर यह समूह अपने गुरु (शुक्राचार्य जी) के गुरु आदि पुरुष- ब्रह्मा जी के पास पहुंचे, ब्रह्मा जी ने निर्णय देने के लिए संतो, सज्जनों, शरीफ, ओर देवताओं को भी बुलाया और एक भोज-दावत का आयोजन किया।

दावत में ब्रह्मा जी ने पहले शिकायतकर्ता को खाने के लिए आमंत्रित किया। शिकायतकर्ताओं के खाना शुरू करने के पहले ब्रह्मा जी ने कहा, एक शर्त है, खाना खाते हुए हाथ की कोहनी नहीं मुड़ना चाहिए, हाथ सीधा ही रहना चाहिए।

इस शर्त के कारण, शिकायतकर्ताओं को खाने में काफी परेशानी हुई, कुछ भूखे ही रह गए, कुछ हाथ ऊपर उठाकर निवाला मुंह में गिराते, जिससे कुछ मुंह में जाता और कुछ आसपास गिर जाता जिससे खाने की बर्बादी हुई, चेहरा व कपड़े गंदे हुए वह अलग।
 शिकायतकर्ताओं के खाने के उपरान्त ब्रह्मा जी ने सज्जनों, संतो, देवताओं को शिकायतकर्ताओं के सामने ही खाने के लिए आमंत्रित किया और वही शर्त दोहरायी।

इस तबके ने बिना किसी परेशानी के आपस में कहा कि, आमने सामने बैठ जाओ और एक दूसरे को खिलाते जाओ।

शिकायतकर्ता देखकर परेशान हुए कि इस शर्त (खाना खाते हुए हाथ की कोहनी नहीं मुड़ना चाहिए, हाथ सीधा ही रहना चाहिए) का पालन क्या इतना आसान भी हो सकता था, जो हमसे नहीं हुआ ।

खाने के उपरान्त ब्रह्मा जी ने कहा की शिकायतकर्ताओं आप सभी, मैं-मैं, मेरा-मेरा, मेरे-मेरे कहते हो और बैसे ही व्यवहार करते हो और यह दूसरा तबका हम-हमारा-हमारे कहता और बैसे ही व्यवहार करता है । इस पर दोनों तबको ने ब्रह्मा जी से पूछा कि आप क्या करते हैं, ब्रह्मा जी ने कहा मेरे लिए सब, सबका, सबके लिए ही है, सब महत्वपूर्ण हैं ।

समाज एवं संसार में देखे तो जो तबका 'मैं-मैं, मेरा-मेरा, मेरे-मेरे' कहता है और बैसे ही व्यवहार करता है वह 'चालाक, चोर, बदमाश, लुटेरे, डाकू, शैतान एवं राक्षस' और जो तबका हम-हमारा- हमारे कहता और बैसे ही व्यवहार करता है वह सज्जनों , संतो, शरीफों, महात्माओं एवं देवताओं तथा जो सब, सबका, सबके लिए ही है, सब महत्वपूर्ण हैं और बैसे ही व्यवहार करता है वह भगवत/भगवान की श्रेणी में रखे जा सकते है ।***

खुला पत्र-46

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, शहरी नगर विन्यास से जुडी हुई विसगंतियो, समस्याओं के संबंध में: -

जितने भी पुराने ग्राम, नगर, महानगर है वहां ढांचागत सुविधाएं जीर्ण-शीर्ण हो ही गई है, कुछ शहरों में छोटे स्तर पर पुराने मकानों को तोड़ तोड़कर चार-पांच या आठ-दस मंजिला मकान बना लिए गए है और बिल्डरों ने पैसे कमा लिए लेकिन मूलभूत सुविधाओं जिनमें, क्रीड़ा-स्थल, पार्क-घूमने फिरने की खुली जगह होती है में कोई नयापन नहीं आया-वल्कि चींजे और भी ज्यादा क्लिष्ट हो गयी हैं- क्योंकि बड़ी इमारतों ने जमीनी स्तर पर बहने वाली हवा को भी वाधित किया है।

जरूरत है प्रधानमंत्री आवास योजना, मुख्यमंत्री आवास योजना जैसी तमाम आवासीय योजनायें जो ग्रामीण एवं नगरीय विकास को ध्यान में रखकर नहीं बनायीं गयी को रोककर ग्रामीण एवं नगरीय विकास ढांचागत सुविधाओं पर व्यापक विचार विमर्श करने की, जरुरत है यह सम्बाद की क्यों पच्चीस तीस मंजिला मकान नहीं बनाए जा सकते हैं, गांव में क्यों बहुमंजिला इमारतें बनाकर बाकी क्षेत्र खेती, घूमने-फिरने, खेलने के लिए या छोटे घने जंगल के लिए नहीं छोड़ा जा सकता, शहरों में जो बच्चे-बड़े खुली हवा, धूप के लिए तरस जाते हैं क्या उन्हें एक नए मकान में रहने को नहीं मिलना चाहिए ?

जरुरत है फैक्ट्रियों के लिए नए आर्थिक क्षेत्र बनाने के साथ-साथ नए वन्य-कृषि क्षेत्र (Agro-Forestry zone) बनाने की, जहां तक इस ढाँचागत व्यवस्था के लिए पैसे का प्रश्न है तो वह एक व्यक्ति की जगह समूह को पच्चीस-तीस वर्षो का ऋण देकर और फिर उसे पूरे समूह-ग्राम/नगर/महानगर से वसूल कर पूरा किया जा सकता है।
जरुरत है उपरोक्त को शुरू करने की:

खुला पत्र-47

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, इंसान को काम के संबंध में:

कहावत है अलादीन के चिराग की: एक दिन जब चिराग को साफ किया गया तो उसमे से एक जिन्न प्रगट हुआ, प्रगट होते ही उस जिन्न ने कहा-'मेरे आका, क्या हुकुम है', क्या काम है। जो काम बताया गया, उस जिन्न ने थोड़े ही देर में वह कार्य पूरा कर दिया इसके बाद जिन्न ने फिर पूछा कि 'मेरे आका, क्या हुकुम है, क्या काम है' लोगों ने और काम बताया और जिन्न ने वह काम भी पूरे कर दिए, और फिर सामने खड़ा हो गया कि 'मेरे आका, क्या हुकुम है, क्या काम है', मुझे काम बताओ-काम बताओ, काम नहीं बताओगे तो मैं तुम्हारा सिर फोड़ दूंगा और यहां से परेशानी शुरू हुई, कुछ जिन्न द्वारा मारे गए और कुछ ने जिन्न को बेमतलब के कार्य-जैसे समुद्र के पानी को छलनी में भर कर लाओ, आसमान के तारे गिन कर वताओ या एक डंडा जमीन पर खड़ा करो और फिर उस पर ऊपर नीचे चढ़ते-उतरते जाओ तब तक जब तक हम रुकने को ना बोलें इत्यादि या कि सूखे चावल और दालें मिला दिए और उसे अलग अलग करने को कहा इत्यादि।

यह कहानी एक इशारा है, जिन्होंने जाना उन्होंने कहा कि इंसान ही वह जिन्न है जिसे काम चाहिए, जिसे यदि काम ना हो तो इंसान या तो खुद का सिर फोड़ लेगा या दूसरों का सिर फोड़ देगा, ऐसा जानने वालों ने कार्यों की एक सतत व्यवस्था बनाई जो इंसानों के गुणधर्म, रुचि-अभिरुचि, उम्र-अनुभव का ध्यान भी रखे   और इस तरह   वर्ण और आश्रम की व्यवस्था बनाई।

कलयुग में यह व्यवस्था लगभग विस्मृत ही रही या लोगों की श्रुती एवं स्मृति में ही रही, यथार्थ में पिछले पच्चीस सौ वर्षों में यह वर्ण और आश्रम की व्यवस्था रही हो ऐसा इतिहास में दिखाई नहीं देता है और आज भी यह समाजिक ताने-बाने की सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था मशीनों के, मीडिया के शोर एवं जनसंख्या के शोर-बोझ तले दबी हुई है।

जरूरत है वर्ण और आश्रम व्यवस्था पर संवाद की, शायद इस वर्ण+आश्रम=वर्णाश्रम व्यवस्था में आज दिखने वाली अधिकांश समस्याएं ही समाधान में बदल जाए, जरूरत है शुरुआत करने की।***

खुला पत्र-48

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, जनसंख्या बढ़ने और मशीनों के बढ़ने का रोजगार से संबंध के बाबत: -

एक जमाना था, कुछ सौ वर्षों पहले जीवन कठिन था, इंसान जीवन में काम के बोझ से ही परेशान रहता, इन परेशानियों से उबरने के लिए भारत जैसे देशों में तबके विचारकों ने सुझाया कि परिवार में ज्यादा बच्चे होंगे, तब, सभी जब मिल-वांटकर काम करेंगे तो जीवन आसान हो जाएगा।

लेकिन जहां बहुत ठंड होती है-जहां पर वर्फ पड़ती है वहाँ जनसंख्या का बढ़ाना भी आसान नहीं होता उन स्थानों पर तबके विचारकों ने सुझाया कि दूसरे जगहों से धन संपदा, व्यापार द्वारा, बेवकूफ बनाकर, लूट कर या युद्ध में जीत कर ले आओ और मजे में जियो और इसके अतिरिक्त काम करने के लिए गुलाम या गुलामों जैसी मशीने बनाओ जो हमारी मदद करें, यह सब करने से जीवन आसान हो जाएगा। इन विचारकों के सुझाये अनुसार उपरोक्त तीनों ही कार्य जनसंख्या बढ़ाना, दूसरे जगह से धन-संपदा ले आना या मशीनों का बढ़ाना आज भी जारी है।

लेकिन आज दिक्कत यह खड़ी हो गई कि दुनिया में सभी जगह जनसंख्या बढ़ गई, सभी जगह मशीनें आ गई और सभी व्यापारी, बेवकूफ बनाने, लूट- खसूट, या युद्ध में जीतने के प्रयासों में जुट गए और इस तरह पुराने विचारकों की राय/सुझाव अब कारगर नहीं रही।

आज सबसे बड़ी समस्या यह हो गयी है कि अधिकांश लोग खाली हो गए, लोगों के पास काम नहीं है, रोजगार तो दूर समय बिताने का जरिया भी नजर नहीं आता।

हालांकि आज-कल (सन दो हजार बीस) लोगों के आवागमन पर रोक लगाने की कोशिश हो रही है, लेकिन समस्या विकराल है।

समाधान के रूप में आज के विचारकों में चर्चा है कि-जनसंख्या, मशीन, रोजगार व व्यापार कितना, कहां के ऊपर पुनर्विचार हो जिसके फलस्वरूप ही पूरी पृथ्वी पर, जल, जमीन, जंगल के मध्य समरसता आयेगी- एक प्राकृतिक प्रसन्नता ।***

खुला पत्र-49

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, खानपान की कहावतों के संबंध में:

कुछ प्रचार जैसे:
"एक ग्लास दूध सेहत के लिए आवश्यक है,
संडे हो या मंडे रोज खाओ अंडे,
एक सेव रोज खाने से डाक्टर/बीमारी दूर होता है (An Apple a day keeps doctors away)
खुशियों के पल हों और बैठे हम-तुम, चार यार और साथ में हो गुलाब-पाइपर सोडा",

उपरोक्त प्रचार को गौर से देखोगे तो पाओगे की यह वाकई में "बीफ- गाय- भैंस के मांस का, मुर्गा-मुर्गी के मांस का, दवाइयों का और शराब का प्रचार है जो लोकलुभावन-दोस्ताना अंदाज में, लोंगो के हमदर्द बनते हुए किया गया है, लोगों की बर्बादी के लिए किया गया है। कुछ लोगों की मति मारी गई है और वह ऐसा मकड़ जाल बुनने मैं व्यस्त हो गए हैं जिसमें अंततः मकड़ी (वह)स्वयं फस कर मर जाती है।

गाय के लिए इतने चारे-चारागाहों की आवश्यकता होने लगी कि ऐसे मकड़ जल बुनने वाले कभी अमेज़ान के जंगलों, कभी ऑस्ट्रेलिया के जंगलों, कभी रोहिंग्या जैसे पर्वतों पर आग लगवाने, फिर उसे समतल करवाने के लिए विवश हो जाते है, जिससे वहां जंगली जानवर खत्म हो जाए और आने वाले दिनों में घास पैदा हो सके जिससे गाय भैंस पाली जा सके।

लोगों की स्वतंत्र सोच लगभग खत्म हो गई और विचारक, सद्गुरु, कथावाचक, ज्योतिष, पंडित या तो व्यापारियों की शरण में चले गए हैं या खुद, कुछ छोटे-मोटे व्यापारी हो गए और उस चोले को जो गेरुआ है या श्वेत है या मुनियों की नग्नता ही हो, जिस पर लोगों का थोड़ा विश्वास अभी भी बचा हुआ को भी इंटरनेट के सहारे बर्बाद किए जा रहे हैं, जिससे पूरी की पूरी मानव जाती कीड़े- मकोड़ों या जीता जागता माँस का टुकड़ा या चलती फिरती लाश से ज्यादा नहीं रह गयी है |

शायद आज आम लोगों को ही अस्वीकृति में हाथ उठाना होगा, अपने आप को एकांत देना होगा, संवाद करना होगा, प्रार्थना करनी होगी, नहीं तो आने वाले समय में मकड़ी के जाल में फंसने और छट-पटाने के अलावा बहुत कम ही विकल्प बचे है |

जीव की हत्या, निर्जीव का दोहन सामूहिक बर्बादी लाता है, समय है महात्माओं-जंगलों में बैठे बाबाओं को भी आम जनता के सामने आने का और सभी को सुखद भविष्य की और ले चलने का ।***

खुला पत्र-50

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल से जुडी हुई समस्याओं के समाधानों के लिए विचारकों के मध्य मंथन की आवश्यकता के संबंध में: -

पृथ्वी पर मनुष्य के जीवन के अवतरण को लेकर विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न मान्यताएं आज भी प्रचलित है और आवागमन के पर्याप्त विकल्प उपलब्ध नहीं होने के पहले इस बात को लेकर मानसिक रूप से ज्यादा परेशानी नहीं थी, कुछ इलाके की कौमे कहती हैं भगवान ने खासतौर पर उसकी ही कौम को बनाया है और कहा है कि जाओ धरती पर राज्य करो एवं धरती की व्यवस्था देखो ।

कुछ कहते हैं स्वर्ग में आदम एवं इव थे और उन्होंने शैतान के सानिध्य में आने से एक निषेध किया हुआ फल-सेव -apple खा लिया और भगवान ने इस बात पर नाराज होकर उन्हें (आदम एवं इव को) अपने पाप का प्रायश्चित करने के लिए धरती पर धकेल दिया और साथ में कहा गया कि एक दिन भगवान-मसीहा, अल्लाह आएंगे और वह तुम्हारा और तुम्हारे द्वारा होने वाली सभी संतानों का उद्धार करेंगे, वह दिन कायनात की कयामत या चमत्कार का दिन होगा।

ऐसे मानने वाले के अधिकांश तबकों में मरने के बाद मृतक को जमीन में इसलिए दफन कर दिया जाता है कि वह कयामत के दिन उपस्थित हो सके। ऐसे मृतक जिन्हे जमीन में दफन कर दिया गया है, कयामत का बेसब्री से इंतजार कर रहे हैं (यह वात अलग है की हजारों वर्षों में उनमें से बहुत से तो जमीन में दवे-दवे पेट्रोल-डीजल में ही परिवर्तित हो गए होंगे या मिट्टी जैसे ही हो गए होंगे या कयामत की आशा ही छोड़ चुके होंगे) और ऐसे धर्मों के अनुसार कयामत का समय अब निकट ही हैं।

समाज में एक दूसरा तबका भी है जो अनुभव की, जानने की बात भी करता है वह कहता है की भगवान को-शिव को, एक समय साकार रूप में प्रकट होने की इच्छा हुई तब भगवान ने-शिव ने, अपने ही सैकड़ों रूप बनाए और प्रकृति को आगे बढ़ाया, अतः

हम सब भगवान की ही संताने हैं। भगवान के द्वारा पाप का प्रश्न ही नहीं उठता, इसलिए रोज ही भगवान की, कायनात की कयामत है, रोज ही चमत्कार है, आना-जाना तो बस रूप बदलना जैसा है।

अधिकांश विज्ञान को जानने वाले सब यह जानते ही हैं कि ऊर्जा ना तो पैदा की जा सकती है ना ही समाप्त की जा सकती है, ऊर्जा का बस रूप ही परिवर्तित हो सकता है, और ऊर्जा का यह परिवर्तन शाश्वत है और यही शाश्वतता प्रकृति है, इसमें परेशानी की क्या बात है।

उपरोक्त दोनों विचारों को मानने और जानने वालों के मध्य एक मंथन की आवश्यकता है, जो जल, जमीन, जंगल से जुडी हुई समस्याओं के समाधानों के लिए प्राथमिक रूप से जरुरी है ।***

खुला पत्र-51

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं न्याय की उचित समय पर सहज, सर्व-सुलभ और मुफ्त व्यवस्था के संबंध में: -

मनुष्य की वायुमंडल में जो दखलअंदाजी है वह हर जगह पर्याप्त दिखाई देती है, कुछ दखलअंदाजियां छोटी-छोटी दिखाई देती है लेकिन यह दखलअंदाजियां प्राकृतिक रूप से जरूरी लगती है, कुछ और दखलअंदाजियां है जो विल्कुल ही गैरजरूरी लगती है।

बेहतर सामाजिक व्यवस्था के लिए शिक्षा, सभी इंसानो, जीवों का स्वास्थ्य और उचित समय पर सहज, सर्व-सुलभ मुफ्त न्याय की व्यवस्था होनी चाहिए लेकिन लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं एवं व्यापारवाद की दखलअंदाजियों ने, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं न्याय को ही सबसे ज्यादा क्लिष्ट, खर्चीला एवं असहज बना दिया है ।

भारत जैसे देशों में शिक्षा, स्वास्थ्य एवं न्याय में लगे हुए कामगारों एवं नामदारो का गुजारा चलता रहे, उनका सम्मान बना रहे इसके लिए पूर्व में - गुरु दक्षिणा, श्रमदान एवं स्वैच्छित सहयोग की व्यवस्था रही है, लेकिन समय के गर्त में, आलसी होने, अनुसन्धान न करने के कारण और सुरक्षा पर ठीक से ध्यान ना देने के कारण- राज्यों की अन्य व्यवस्थाओं के साथ शिक्षा, स्वास्थ्य एवं न्याय की उचित समय पर सहज, सर्व-सुलभ और मुफ्त व्यवस्था भी ध्वस्त हो गई।

जरूरी है सोच बदलने की, व्यवस्था बदलने की। जरुरी है शिक्षा, स्वास्थ्य एवं न्याय की उचित समय पर सहज, सर्व-सुलभ और मुफ्त व्यवस्था फिर से शुरू करने की।

यह पक्का है व्यवस्थित होने में ज्यादा समय नहीं लगता, वस् शुरुवात करने भर की देरी है।

भगवान हमारा मार्ग प्रशस्त करें।***

खुला पत्र-52

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, अच्छा होना क्यों अच्छा होता है के संबंध में:

आज समाज में जितनी कहानियां, जितनी कथाएं, जितने नाटक, जितने गाने, जितनी पिक्चर/सिनेमा है या बनती है, चलती है या चलाई जाती है उन सभी में अंत हमेशा धनात्मक-प्रसन्नता-दायक, बुराई पर अच्छाई की जीत, अधर्म पर धर्म की जीत, शैतान पर संतों-धर्मात्माओं-महात्माओं की, दानवों पर देवी-देवताओं की जीत दर्शाता हुआ होता है, चाहे उन सभी की कहानी, गाने किसी ने भी लिखे हो, निर्देशन किसी ने भी किया हो, पैसा किसी ने भी लगाया हो और निर्माता कोई भी हो।

सभी यह मानते हैं और बहुत से जानते भी है की अंत तो आनंददायक ही होगा यह शायद इसलिए भी कि दुनिया में प्रसन्नता ही अकेले में सबसे बड़ी जीवनदायिनी शक्ति है, भावों में बदला-रिवेंज लेना सबसे बड़ा भाव है ।

सभी यह भी जानते हैं कि दुख में, संघर्ष में समय का पता चलता है लेकिन सुख में, आनंद में कब समय बीत जाता है पता ही नहीं चलता शायद इसलिए ही सारी की सारी कहानियाँ, कथाएं संघर्ष की, दुख की ही होती है और जैसे ही सुख की घड़ी आई पिक्चर/मूवी खत्म हो जाती है।

किसी को बताया ही नहीं जाता कि अच्छे-अच्छे रहने-होने पर क्या-क्या होता है?, जरूरत है- महात्माओं की संतो की आगे आने की और सिनेमा भाग-दो बनाने की, कि अच्छा होना क्यों अच्छा होता है, अच्छा होना क्या और कैसे सुखकर होता है, जिससे व्यक्तियों में, परिवारों में, समाज में सुख का संचार हो।

संतो, सज्जनों, सद्गुरुओं, महात्माओं का आवाहन है- सिनेमा के दूसरे भाग के निर्माण के लिए।***

खुला पत्र-53

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, प्रकृति की चक्र में चलती हुयी व्यवस्था के संबंध में:

प्रकृति की सारी की सारी व्यवस्था चक्र में चलती है, कुछ भी ऐसा नहीं है जिसका अंत खुला (open ended) है, प्रकृति की सारी व्यवस्था अर्थात पदार्थों का चालन-प्रचालन, निगरानी एवं नियंत्रण एक बंद- पूर्ण चक्रों में ही रहती है अंतर बस इतना होता है कि कोई चक्र छोटा होता और कोई चक्र बड़ा।

मनुष्य और कोई भी प्राणी, पदार्थ, जीव-निर्जीव इस चक्र में बाधा डालने की कोशिश करता हुआ प्रतीत हो सकता है लेकिन तब भी चक्र चलता ही है, जैसे कि सूर्य की गर्मी से समुंद्र से बादल बने, अब यह बादल यदि समुंद्र मैं ही बरस गए या अंटार्कटिका में बर्फ के रूप में भी जम गए तो एक चक्र पूर्ण हुआ समुंद्र का पानी समुंद्र में- और इस तरह एक चक्र छोटा ही सही लेकिन पूरा हुआ ।

अब यदि समुद्र से उठा हुआ बादल हिमालय में बरसता है तो वह नदियों से होता हुआ, वृक्षों द्वारा, जमीन द्वारा, जीवो द्वारा ग्रहण होकर फिर विसर्जित होता हुआ एक लंबी प्रक्रिया के बाद या तो सूर्य की गर्मी से बादलों में या नदियों द्वारा समुंद्र में फिर से जा मिलेगा। इसी तरह भोजन का चक्र है, ज्ञान-विज्ञान का चक्र है और जीव एवं जीवन का चक्र है, प्रकृति के यह चक्र हमें समझ आये या ना आये यह अलग बात है।

इसलिए हमें जो बचपन में या गाने में सुनाया जाता है की "कुएं का पानी, कुएं में जाए, हमारी स्लेट सूख जाए", " नदी का पानी नदी में जाए हमारी धान सूख जाए" जीवन के प्रति भी ऐसा ही दृष्टिकोण रखते हैं तो हमारा जीवन भी इतना ही सरल-सहज हो जायेगा। पानी के बड़े बांध, बाधाओं जैसे ही है और बर्बादी लाते हैं।***

खुला पत्र - 54

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, खाली दिमाग-शैतान का घर या भगवान का' के संबंध में: -

एक तबका कहता है: ''खाली दिमाग-शैतान का घर', 'खाली जमीन- खरपतवार की, झाड़ -झंझाड की, बेशरम की या पानी में जलकुंभी की''। जीवन में बीमार पड़ना आसान है, फिसल पट्टी से फिसलना आसान है, गिरना आसान है , गिरावट की आदतों का लगना आसान है, इसलिए खाली मत रहो, हर समय व्यस्त रहो।

दूसरा तबका कहता है: ' जब दिल दिमाग खाली हो तभी ध्यान रखने की जरूरत है, जमीन खाली हो तभी ध्यान रखने की जरूरत है, जब चढ़ रहे हो तब ध्यान की जरूरत है, जब आदतें पाल रहे हो तब ध्यान की जरूरत है। यह तबका कहता है चीजों को ध्यान से खाली करो, खाली करो और ध्यान दो, क्योंकि भगवान, अच्छे फलदार वृक्ष, जीवन में महान बनना तभी संभव है जब चीजें खाली हो और उसे ध्यान से या ध्यान रखकर लगन से बढ़ाया जाये।

एक बिरला ही तीसरा तबका भी है जो कहता है: जंगल की अपनी सुंदरता है, रेगिस्तान की अपनी अलग खूबसूरती है, बर्फीली पहाड़ियों की, समुंद्र की अपनी-अपनी सुंदरता है, छोटे से कीटाणु से लेकर बड़े हाथी तक सब की विशेषताएं है। यह तीसरा तबका कहता है जैसा प्रकृति चलाएं, जैसा धरती रखें आराम से रहोगे, निमित्त मात्र बनकर रहोगे तो आनंद में रहोगे।
इस तीसरे पक्ष के पक्षधर कहते है ''करे करावे आपे आप, मानुष के नहीं काछु हाथ, जो बोले, जो समझे, जो जाने, जो सीखे वह निहाल हो जायेगा, आनंद को प्राप्त रहेगा।

हमारी व्यवस्था बनी रहे, जल, जमीन, जंगल की मूलभूत व्यवस्था बनी रहे इसके लिए एक व्यापक एवं जीवन्त संवाद की आवश्यकता है जो मोबाइल, टी.वी., मीडिया, सोशल मीडिया एवं अखबार से संभव ही नहीं है, इसके लिए अनुभवी लोगों को,

सदगुरुओं को आगे आना होगा, जगह-जगह सामाजिक प्रबंधन के बुद्धिमत्ता एवं संसाधन केंद्र खोलने होंगे तब शायद आगे का रास्ता सुगम हो,
भगवान हमारा प्रशस्त करें।***

खुला पत्र-55

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, समस्याओं के समाधान, जनमत संग्रह द्वारा के संबंध में: -

1). समस्याएं अनेक है- जल, जमीन, जंगल, शुद्ध हवा, शुद्ध जल, साफ जमीन के विषयों पर जैसे जंगल के ना होने से शहर में बंदर उत्पात मचाते हैं, कभी-कभी तेंदुआ भी आ जाता है, शुद्ध हवा नहीं मिलती, कोहरा-धुआं एवं मिट्टी के कणों से मिलकर स्मोग (smoke fog=SMog) बन जाता है, स्वच्छता मिशन के बाद भी नालियां गंदी ही रहती है-शहरों और ग्रामों दोनों जगहों पर।

अनपढ़, जाहिल, गँवार की बात क्या कहे, पढ़े-लिखे, नामदार, ओहदेदारों ने भी सड़कों पर अतिक्रमण/कब्जा कर लिया, मंदिर-मस्जिद लाउडस्पीकर पर अपना राग अलापने से मुक्त नहीं हो पा रहे हैं, हर पुलिस स्टेशन के बाहर जब्त-सुदा गाड़ियां/जायदाद न्याय ना मिलने के कारण जंग/जंगाल खा रही है, शहरों की ढांचागत व्यवस्था बोझिल है ही, देश में एवं प्रदेशों में जल आपूर्ति एवं मल निष्कासन का एक ही विभाग बना दिया गया है?

2). समाधान क्या है: पुलिस से शिकायत, नेताओं के यहां हाजिरी, पंडितों से मौलवियों से कहना या देश एवं प्रदेशों की सत्ता को हर पांच-दस वर्ष में परिवर्तन करते रहना या नौकरों से संचालित, वकीलों द्वारा व्यापारित न्याय व्यवस्था में शिकायत करना जो सरकारी नौकरी अपर कार्यरत न्यायाधीशों को एवं न्यायलय की स्वतंत्रता को विधानसभा, लोकसभा एवं राष्ट्रपति से भी ऊपर मानती है, या घुट घुट कर जीने या आत्महत्या ।

3). गुजरात में एक कहावत है 'मरणाने मुक्ति नाहीं, फ़क्त दीवारें बदलती है कायदा वही रहते" मरने से मुक्ति नहीं मिलती सिर्फ शरीर/दीवारें बदल जाती है कायदे, नियम-कानून तो वहीं रहते हैं अर्थात आत्महत्या से भी मुक्ति नहीं मिलने वाली तब

एक ही उपाय है उपरोक्त व्यवस्था को बदल दिया जाये चाहे इसके लिए जनमत संग्रह ही क्यों न कराना पड़े।

4). कृष्ण के द्वारा शासित स्थान गुजरात से एक नामदार किरदार गांधी जी ने- लोकतंत्र, न्याय, शिक्षा एवं स्वास्थ्य पर अपनी पुस्तक 'हिंद स्वराज' में काफी स्पष्ट लिखा है लेकिन उन को मानने वाले राजनैतिक समूह में एक ने भारतीय मुद्रा/नोटों पर उनकी फोटो लगवा दी तो दूसरे ने उसमें चश्मा भी जोड़ दिया।

जरूरत है न्याय व्यवस्था को जिम्मेदार बनाने की और लोकतंत्र को वाकई में लोकतंत्र या डिवाइन क्रेसी बनाने की जो शायद जनमत संग्रह से ही होगा,
हमें कार्य के साथ प्रार्थना भी करनी होगी, भगवान हमें आशीष दे।***

खुला पत्र-56

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, समाज में फैली हुयी भ्रांतियां दूर करने के लिए एक वृहद धार्मिक संवाद के संबंध में: -

भूत वर्तमान एवं भविष्य तीनों तलों पर देखने वाले या कहे तीन ऋचाओं पर क्रियाशील रहने वाले-यानि कि जो गुजर गया एवं जो आने वाला है और उस के मध्य निरंतर परिवर्तित होने वाला वह बीच का बिंदु जो अपनी तीव्र गति के कारण स्थिर जान पड़ता है और वर्तमान कहलाता है पर बिचरते हैं, ऐसे पूज्यनीय कहते हैं:-

जीव व निर्जीव आपस में भी परिवर्तित होते रहते है, समुंद्र का नमक खाने से शरीर का हिस्सा हो जाता है और शरीर से विसर्जन होने पर वायुमंडल का हिस्सा हो जाता है या वापिस समुंद्र में जाने से समुंद्र का हिस्सा हो जाए।

ऐसे में कौन श्रेष्ठ, कौन नेष्ट/निकृष्ट है, तब यह कहना कि 'बड़े भाग्य मानुष तन पाया' या 'मनुष्य सभी में श्रेष्ठ है' का क्या अर्थ रह जाता है और इसका अर्थ भी कि मैं महान, मेरा धर्म महान है, मैं मुसलमान, सिख, ईसाई, बुध, जैन, हिंदू इसका क्या औचित्य रह जाता है, सिवाय अपने अज्ञान को प्रदर्शित करने के।

जो शाश्वत है, सनातन है वही धारण रहता है, वही धर्म है, यही धरा का मर्म है, कण-कण में भगवान है या कड़-कड़, जीव-निर्जीव सब एक श्रृंखला का हिस्सा है, अमीबा से लेकर आदमी तक, एक प्रक्रिया का, बीज से वृक्ष होने तक और फिर विखंडन होने तक सबकी एक श्रृंखला है, ऐसे में कौन, क्या, कैसे, क्यों प्रश्न बेमानी हो जाते हैं।

समय है, मंथन का, ज्ञानी-विज्ञानी, वीरो-महावीरों और संतो-शैतानों के मध्य और समाज में फैली हुयी भ्रांतियां दूर हो इसके लिए समय आ गया कि आम जनों में एक वृहद धार्मिक संवाद हो। गुरु और सदगुरुओं से निवेदन है कि वह इस कार्य में अपना आशीष दे।***

खुला पत्र-57

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, वातावरण के प्रति हमारी सामूहिक लापरवाही एवं जिम्मेवारी के संबंध में:

भारत में, बिहार जैसे राज्यों में, ठंड के दिनों में, हवा में धूल के कणों की संख्या तीन सौ पचास-चार सौ पार्ट पर मिलियन (दस लाख में) तक पहुंच जाती है जो मानक (साठ) से छह गुना ज्यादा है ।

हवा में तैरते हुए धूल के कण, नमी के साथ मिलकर एक चादर जैसी परत बना लेते हैं और सूर्य की रोशनी को धरती पर आने से रोकते हैं, ऐसा ही बाहनों के धुएं, कोयले से चलने वाले बिजली घरों के धुंए से होता है, जिसे अब स्मोग कहते है।

दिल्ली एवं राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में हर वर्ष स्मोग की यह समस्या आती है और सभी- मुख्या मंत्री, प्रधान मंत्री ग्रीन ट्रिब्यूनल आने वाले वर्ष के लिए बड़े बड़े वायदे करते है लेकिन अगले वर्ष फिर स्मोग आ जाता है।

प्रदूषण का होना, स्मोग का बनना शायद वातावरण के प्रति हमारी लापरवाही और इसे ठीक करने की हमारी सामूहिक इच्छा शक्ति में कमी ही को दर्शाता है ।

बिहार में और बिहार जैसे अन्य स्थानों पर यह समस्या ज्यादा हो गई है क्योंकि यहाँ जंगल एकदम खत्म करके खेत एवं शहर बना दिए गए हैं ऐसे में यदि पेड़ न हों तो जमीन पर मिट्टी को कौन बांधे रखें । जंगलो के न होने से और खेतो एवं रिहायसी इलाके में बिलकुल ही पेड़ ना होने से शुद्ध हवा की कमी तो हुई ही है।

अखबारों की संख्या एवं अखबारों के पृष्ठों की संख्या के नियंत्रण की जरूरत है अखबारों को एवं टीवी न्यूज़ चैनलों को जनता के करो से विज्ञापन एवं सस्ता कागज व अन्य रियायतें देना बंद करने पर विचार जरूरी है, कागज पेड़ों की बर्बादी है, और न्यूज़ चैनलों का शोर दिमाग का पागलपन है, जरुरत है स्वाबलंबन की, सम्यकता की जरुरत है, कागजों का इस्तेमाल कम से कम हो इस प्रयास की।

आश्चर्य है कि ऐसी मूल बातों के लिए भी पेरिस में प्रोटोकॉल बना, भारत तो प्रकृति प्रधान देश है पर्यावरण पर पर्याप्त ध्यान देने की शुरुवात तो हमें ही करनी होगी।***

खुला पत्र: 58

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल तथा श्रम, साधन, संसाधन की सनातन व्यवस्था के संबंध में:

यदि हम आज से करीब पच्चीस सौ वर्षों पहले देखे तो पाएंगे कि दुनिया के महान व्यक्तियों में एक तरफ तो बुद्ध, महावीर, कन्फ्यूशियस, लाओत्से, पाइथागोरस हुए वही दूसरी तरफ चाणक्य, सुकरात और प्लेटो भी हुए, इन दोनों ही तरह के महान व्यक्तियों ने उस समय दुनिया की दिशा और दशा बदल दी, जिसका प्रभाव आज तक दिखाई देता है।

फिर इन महान आत्माओं के उपरांत पूरी दुनिया को जिन्होंने झकझोरा वह ईसा-मसीह, पैगंबर साहब, शंकराचार्य और नानक हुए। यह सब लोगों के दिल दिमाग को प्रभावित करते आए हैं और आगे भी इनमें से कुछ संदर्भ के लिए उपस्थित रहेगें ही ।

यह सभी वैश्विक रूप से बोले और इनकी वाणियों का प्रभाव एक नए ही वर्गों को जन्म दे गया, जो मनुष्यत्व की स्वाभाविक पशु-वृत्ति में, 'मैं और मेरा' से 'हम और हमारा' तक बदलाव कराने में सक्षम हुई, लेकिन इनमें से कोई भी, प्रकृति की स्वाभाविक वृत्ति, 'सब और सबका' तक मनुष्यत्व को प्रवृत्त नहीं कर पाई।

यह सब महान आत्मायें मनुष्यों में यह समझ, ताकत, बहादुरीपन तो दे पाए, कि 'में और मेरा धर्म एवं मेरा देश सर्वश्रेष्ठ', 'मैं महान, मेरा देश महान, मेरा धर्म महान है', लेकिन धर्म की मूल भावना कि 'मैं महान और तू भी महान', कि, 'मैं भी भगवान का अंश और तू भी भगवान का अंश', कि, प्रकृति शाश्वत है, सनातन है, इसलिए धर्म भी शाश्वत है, धर्म भी सनातन है, कि, श्रम, साधन, संसाधन एवं सफलता की वही व्यवस्था कारगर हो सकती है जो सब का ख्याल रखें, सब का सम्मान रखें, की समझ जन मानस में आये को आने वाले समय के लिए छोड़ गए।

आने वाले समय में सभी ज्ञानी-जन, विज्ञानी-जन शायद इस बाबत संवाद करेंगे इसकी आशा से, प्रार्थना से।***

खुला पत्र: 59

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल तथा विद्वानों, बुजुर्गों, विचारकों, साधु-संतों का ख्याल एवं सम्मान,

समाज में एक बहुत पुरानी कहावत चलती है:- 'भीलन लूटी गोपिका, वही अर्जुन, वही बाण' ।

कहते है, महाभारत युद्ध के समाप्त होते ही, अर्जुन के धनुष गांडीव की शक्ति खत्म हो गई थी, सब कुछ जानते हुए भी कि युद्ध में कौन-क्या है, अर्जुन को अपनी धनुर्विद्या और स्वयं के श्रेष्ठ धनुर्धर होने पर अभिमान था। कहते है एक दिन जब गोपियों को जाना था तब श्री कृष्ण ने गोपियों की सुरक्षा के लिए अर्जुन को गोपियों के साथ भेजा। कहते है रास्ते में भीलों ने आकर गोपियों का धन-आभूषण लूट लिए और अर्जुन एवं अर्जुन के धनुष बाण रखे के रखे रह गये, और तब से यह कहावत प्रचलित हुयी - 'भीलन लूटी गोपिका, वही अर्जुन, वही बाण' ।

आध्यात्मिक जगत में कहते है, कि, श्री कृष्ण के कहने से ही इस कार्य में भीलों का नेतृत्व एकलव्य ने किया था, जिससे अर्जुन का अभिमान टूटे और एकलव्य को एक अच्छे धनुर्धारी होने का सम्मान मिले।

कहा जाता है कि जो व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र- विद्वानों, बुजुर्गों, विचारकों, साधु-संतों का ख्याल रखना एवं सम्मान करना छोड़ देता है उसका पतन निश्चय है, शीघ्र नहीं तो विलंब से, लेकिन होगा जरूर, ऐसा हो सकता है कि व्यक्ति, परिवार, समाज या राष्ट्र को अपने पतन का कारण स्पष्ट समझ ना आए, लेकिन पतन होगा अवश्य, एवं जो व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र- साधु संतों का सम्मान रखता है, बुजुर्गों एवं विद्वानों के आश्रय में रहता है उसका उत्थान निश्चित है।

हमें आगे कदम बढ़ाने के पहले, दुनिया में परिवारों, समाजों और देशों की गिरावट और उत्थान को (पिछले ढाई हजार वर्षों के इतिहास के) उपरोक्त नजर से भी देखने की जरूरत है।

समाज एवं देश में सम्बाद कायम हो और सहमति वने सहयोगात्मक कार्य शुरू हो इसके लिए ग्रामों में चौपाल-चिलम-हुक्का, शहरों में संगोष्ठी, संकीर्तन एवं जलपान शुरू करने की जरूरत है।***

खुला पत्र-60

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, मल-मूत्र विसर्जन में देशी-विदेशी या भारतीय-पश्चिमी कमोड की उपादेयता के संबंध में: -

1). ज्ञानी-जन कहते हैं:-
"जो खड़े-खड़े ही मल मूत्र विसर्जन करे वह जानवर",
"जो कुर्सीनुमा बैठकर मल-मूत्र विसर्जन करें वह बीमार", और
"जो जमीन पर बैठकर मल-मूत्र विसर्जन करें वह स्वस्थ्य इंसान",
और अनुभवी व विज्ञानी-जन कहते हैं:-
"जो जमीन पर बैठकर मल मूत्र विसर्जन करता है वह स्वास्थ्य को धारण करेगा",
"जो कुर्सी में बैठकर मल मूत्र विसर्जन करेगा वह बीमार हो जायेगा", और
"जो खड़े होकर मल मूत्र विसर्जन करेगा वह जानवर जैसी मन-बुद्धि का हो जायेगा",
उपरोक्त के अनुसार तथाकथित देशी-विदेशी या भारतीय-पश्चिमी कमोड की उपादेयता पर संवाद जरूरी है,

2). संवाद जरूरी है कि बाथरूम घर में सबसे निकृष्ट जगह तीन फ़ीट गुणा तीन फ़ीट का होना चाहिए या बाथरूम में देशी-विदेशी दोनों तरह की कमोड/शीट की व्यवस्था बगल-बगल में भी हो सकती है।

यदि कोई अपने खेत में बाथरूम जाये या जंगल में जाये तो प्रधान मंत्री कार्यालय या यूनाइटेड नेशन को क्या दिक्कत है, लोगों को खाना नहीं जुटता, सड़को पर भिखारी दिखाई नहीं देते है, ठण्ड के दिनों में लोग शीत लहर से और गर्मियों में गर्म हवा -लू से लोग मरते है, पानी की किल्लत के निवारण के वेयर में अभी कार्यक्रम ही बन रहा है, धनी और ताकतवर राष्ट्र कमजोर राष्ट्रों को मुद्रा के मूल्यन-अबमूल्यन के द्वारा लगातार लूटते आ रहे लेकिन यूनाइटेड नेशन को बाथरूम ही ज्यादा दिखाई देता है- तो कोई क्या कर सकता? इन विरोधाभासी बातों पर आम जनता का आपस में सम्बाद और अपना कार्य प्रारूप बनाना जरुरी है ।

3). सामूहिक एवं सार्वजानिक स्थानों पर बहुमंजिला- व्यापारिक होटल की तरह बनाये जा सकते है, जिसमे बच्चों, बुजुर्गों, महिलाओं, पुरुषों के लिए देशी, विदेशी टॉयलेट शीट/कमोड की व्यवस्था हो, नहाने की. गर्म एवं सादा पानी की व्यवस्था हो, कपडे धोने, सूखाने एवं प्रेस करने की व्यवस्था हो और इसके साथ अमानती सामान घर भी हो। इन सभी स्थानों पर एक छोटा जल शुद्धिकरण संयंत्र रखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त घरों में कपडे धोने की व्यवस्था को सामूहिक जगहों पर स्थानांतरित करने कि जरुरत है जहाँ हाथ और मशीन से कपडे धोये जा जहाँ आंतरिक जल शुद्धिकरण संयंत्र भी हो।

समाज में स्वास्थ्य सुधार के लिए यह जरुरी है की सफाई और खाद्यान्न जाँच सरकार से समाज के दायरे में आये।***

खुला पत्र-61

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल, वातावरण के प्रति हमारी सामूहिक लापरवाही एवं जिम्मेवारी के संबंध में:

1), पंडित-जन कहते हैं कि, जब राहू की दशा-महादशा चलती है तो (चाहे वह एक व्यक्ति हो, या समाज या पूरा संसार ही क्यों न हो) दिमाग बहुत चलाएं-मान होता है, बहुत विचार आते हैं, व्यक्तिगत रूप से एवं सामूहिक रूप से ज्ञान-विज्ञान की बहुत चर्चा होती है, बाजार में सूचनाओं का बहुत तेजी से आना-जाना होता है, प्रवचन-कर्ताओं का बहुत सम्मान होता है लेकिन जो भी कहा जाता है वह सब कार्यों में परिलक्षित नहीं होता।

जब केतु की महादशा आती है, तब नित नए-नए काम होंगे, रोज टूटेंगे, रोज बनेंगे, बिना सिर पैर के काम होते रहेंगे और इन कार्यों को गौर से देखेंगे तो पाएंगे कि कर्म तो हो रहे हैं लेकिन यह सब कर्म व्यर्थ ही जा रहे है, इन कर्मों में एक लक्ष्य-हीनता परिलक्षित होती है। इसलिए पंडित-जन राहू- केतु को ससम्मान शांत रहने के लिए पूजा-प्रार्थना करते हैं।

इसी तरह ज्ञानी-जन कहते हैं कि, समाज में यदि गंदगी एवं ज्ञान की बातें साथ-साथ चल रही है तो समाज में पंडित, क्षत्रिय, वैश्य एवं सेवा-कारों को ससम्मान शांत रहने एवं सामंजस्य के साथ काम करने के लिए आपस में मंत्रणा करनी होगी, भाई-चारा बढ़ाना होगा और शायद पूजा-प्रार्थना के प्रायोजन भी करने होंगे,

2). कृति, आकृति, दुष्कृति, विकृति एवं सुकृति यह स्वाभाविक चरण है प्रकृति में सृजनात्मकता के, तब यदि आज हमें व्यक्तिगत स्तर से वृहद स्तर तक परेशानी नजर आती है दुष्कृतियां या विकृतियां नजर आती हैं तो यह एक शुभ संकेत है कि हमने विकास या कहें पूर्णता की ओर पर्याप्त यात्रा कर ली है और अब एक अच्छी कृति-सुकृति बनने को है, अवतरित होने को है ।***

खुला पत्र-62

ध्यानाकर्षण: जल, जमीन, जंगल के लिए समाज में व्याप्त तमाम कहावतों के संबंध में: -

कहते हैं: **'विनाश काले, विपरीत बुद्धि,** 'जब किस्मत ठीक नहीं होती, तो बुद्धि विपरीत हो जाती है'
'प्रभु जिसको दारुण दुःख देहीं, ताकि मति पहले हर लेहीं', 'जब बुद्धि विपरीत होती है, तो किस्मत साथ नहीं देती' या

भारत और भारत जैसे अन्य देशों की बर्बादी को उपरोक्त कहावतों से तुलना की जा सकती है या कहावतों के परिप्रेक्ष्य में समझा जा सकता है, नहीं तो किसान को कभी भी यह कहावत अच्छी नहीं लगती- 'कि पेड़ों के नीचे फसल नहीं लगती, इसलिए पेड़ काट दो', खेतों में ट्रैक्टर से काम हो रहा है इसलिए सांड-नंदी, बैल, भैंसा की जरूरत नहीं है उसे छोड़ दो या मार दो, किसान कहता 'एक पेड़, एक बीघा में फसल से ज्यादा महत्वपूर्ण है', वह कहता 'एक बड़ा पेड़, कई छोटी घास-फूस, गेहूं, चावल के वालियों या गाजर-मूली से कम महत्व नहीं रखता, वृक्ष जमीन के बीच बीस फीट गहरे में जमीन से जुड़ा रहता है एवं बीस-पचास फुट ऊपर लहराता है, जो पानी, छाया, फल, हवा, फल-फूल, पत्ते, लकड़ी, सुगंध सब देता है। किसानो ने पेड़ कटे , नंदी को वधिया किया, गाय को बुढ़ापे में छोड़ दिया इसलिए किसान गरीब रहता है।

किसान ने पेड़ काटकर वैकल्पिक आय के स्त्रोत ही खत्म कर दिए और वह सरकार की बैसाखियों पर चलने की सोचने लगा।

कहावतें कि- 'आंधी-तूफान में बड़े-बड़े पेड़ उखड़ जाते हैं, छोटी-छोटी घास फूस क्यारियाँ बच जाती है' ।
यह विदेशी आक्रांताओं के द्वारा स्थानीय जनता को डरने-बेबकूफ बनाने के लिए शुरू की थी, और इस तरह की कहावतों ने पेड़ों को, बुजुर्गों को, समझदार को खत्म हो जाने

दिया, इसलिए अब तूफानों को कोई रोक नहीं पाता दिक्कतों को, बर्बादियों को रोकना मुश्किल हो गया।

जहां जवानों को पूछा जाता है वह ताजा - ताजा युद्ध जीता हुआ या युद्ध लड़ने की तैयारी करता हुआ समाज-देश होता है। अच्छे समय में कहावत 'जहां सुमति, तहां संपति नाना', जहां बुजुर्गों का, बुद्धिमानों का सम्मान होता है वहां बच्चों को प्यार भी दिया जाता है, वह समाज, अच्छा समाज होता है। ***

विशेष पत्र

ध्यानाकर्षण: जल जमीन जंगल और वायुमंडल तथा आकाश के मध्य ऊर्जा का प्रवाह

आध्यात्मिक जगत में चर्चा आती है कि युग के शुरुआत में सात तरह की चीजें प्रकट हुई, जैसे सात स्वर, सात रंग, सात स्वाद, इसी तरह इंसानों के भी सात प्रकार हुए,

जब इन सात तरह के इंसान के मध्य कार्य के बिभाजन को लेकर इनसे पूछा गया तो, प्रथम ने कहा 'हम तो प्रकृति के साथ ही रहेंगे, हम ऐसे नहीं बदलेंगे, युग बदलते रहे हमें इससे क्या' और वह आदिवासी ज्यों के त्यों बनी रहे। इसी तरह अन्यों ने भी अपने ही गुणों को फिर से आगे बढ़ाने का निश्चय किया और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र, शैतान और संतों की तरह ही कार्य करने लगे।

पूरी की पूरी प्रकृति में तीन मुख्य होते हैं, जैसे रंगों में लाल, हरा एवं नीला, स्वाद में खट्टा, मीठा, नमकीन, इसी तरह इंसानों में भी तीन मुख्य- शैतान, संत और आदिवासी।

शैतान कार्य शुरू करते हैं, लोगों के दिमाग में (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र) वह लहरें पैपैदा करते हैं, उन्हें उद्वेलित करते हैं, उनसे अच्छे-बुरे, नए-पुराने कार्य करा कर अपनी सत्ता कायम करते हैं, सत्ता कायम रखने की कोशिश करते है।

जब शैतानों की सत्ता, प्रकृति, आदिवासियों को परेशान करने लगती है, तब वह संतो के साथ आकर शैतानों को शांत करते हैं, शैतानों को परास्त करते हैं, उन्हें नशों में डूबा देते हैं, उनके साथ मंथन करते हैं और मंथन से निकले हुए अमृत को अपने पास रख लेते हैं। इस पूरी प्रक्रिया से शैतान निष्क्रिय हो जाते हैं और प्रकृति फिर से हरी-भरी एवं फल-फूल से आच्छादित हो जाती है।

आज की हालत देखते हुए लगता है संतों और आदिवासियों को साथ आकर तथाकथित शैतानों से मंथन करने का समय आ गया है, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र को चयन करने का समय आ गया है कि वह शैतानों के साथ है या संतो के, समय है प्रार्थना का, निर्णय का, और शायद मंथन का।***

बंदना चौधरी

परिशिष्ट-1

जल, शुद्धता एवं स्वच्छ्ता, प्रदूषण तथा वातावरण विषय पर पुस्तक "मीता-जीवन <u>शैली प्रारूप" से उद्धृत आलेख:</u>

1,

जल

जीवन समुद्र में शुरू हुआ था, और सारे गर्भाशयों में जब पेट में बच्चा बड़ा होता है, समुद्र के पानी जैसा ही पानी भरा होता है। सारी जमीन के नीचे पानी है, और पानी के नीचे जमीन। पीने के पानी की क्या कोई कमी है ? केवल प्रबंध उचित होना चाहिए। किसी एक राज्य या किसी दूसरे राज्य के हितों की आड़ में, पूरे जीव जन्तुओं के इसके पानी के ऊपर अधिकार को बलि नहीं दिया जा सकता। यह प्राकृतिक विषय है।

'' शरीर भोजन से बनता है, भोजन जल से उद्भूत होता है, जल वर्षा से, और वर्षा यज्ञ के परिणाम में होती है, और यज्ञ कर्मो से ''।

कृत्रिम वर्षा जैसे प्रकृति को जीतने के प्रयासों को कोई सफलता नहीं मिलती है। अगर पूरी धरती की सतह एक समान होती तो इस पर हर जगह दो से तीन मीटर तक पानी होता। अगर पानी को कहीं गहराई में इकट्ठा करना है तो कहीं न कहीं तो धरती को उठना ही होगा, और इसीलिए समुद्रों के किनारों पर पहाड़ और पहाड़िया बनीं। समुद्र के किनारों पर भी गर्मियों के मौसम में कुओं में पानी का स्तर रोज ब रोज और हफ्ता दर हफ्ता गिरता जाता है, और जब वर्षा आती है या चक्रवात तो कुओं में भी पानी तेजी से बढ़ने लगता है।

1. बड़े बांधों का निर्माण ताकि उन पर बड़े ऊर्जा संयत्र भी लगाए जा सके, आसपास के इलाकों में भूकंप और धरती की ठीक उल्टी दिशा में बड़े भूकंपों का कारण बन सकते हैं, इनसे बचना ही उचित है। बिजली ऊर्जा की पैदावार पानी पर छोटे-छोटे पनबिजली संयंत्रों से और बडे वायु बिजली (विंड टरबाइन) समुद्र में एवं के आस-पास लगाकर की जा सकती है।

2. नदियों को आपस में जोड़ना तो अकल्पनीय रूप से विनाश का कारण बन सकता है, इसे हर कीमत पर रोका जाना चाहिए। नहरें, तालाब और पानी के कुएं, चैक डैम्स और

वर्षा के जल का संग्रहण प्रोत्साहन के योग्य है तथा तालाबों और झीलों को आपस में जोड़ना उचित।

3. वृक्षारोपण न सिर्फ भारत में जरूरी है, बल्कि अफ्रीकन एवं लेटिन अमेरिकन देशों में भी। बाढ़ नियंत्रण के लिए, अकाल से बचाव के लिए, भूजल स्तर को ऊपर उठाने के लिए और दूसरे अन्य लाभों को दृष्टि में रखते हुए यह आवश्यक है कि ये कदम दूसरे देशों के लिए भी मिशाल बने। बाढ़ और सूखा इसिलिए ज्यादा पड़ने लगा है कि नदियों तालाबों और बॉधों कि चौड़ाई गहराई पहाड़ों से आई डुई मिट्टी के कारण भर गई है, जिससे नदिओं के पानी रखने की क्षमता कम हो गई। पहाड़ों से मिट्टी का क्षरण इसलिए बढ़ गया है कि वह पेड़ कटने के कारण नग्न हो गई है और बारिश का पानी बजाए पेड़ो के सीधे जमीन को काटने लगा है और पेड़ न होने के कारण तेजी से बहने लगा है तथा पेड़ न होने से पहाड़ो के अन्दर रहने वाला पानी भी कम (खत्म) होने लगा है।

4. समुद्रों और महासागरों की तलहटी में आणुविक और अन्य हथियारों के परीक्षण पर पूरी तरह रोक होनी चाहिए, ताकि सुनामी की तरह की घटनाएं न हों।

5. पैकेटों और बोतलों में बंद पानी कि इतने बड़े पैमाने पर बिक्री देश के लिए कलंक है। पीने के पानी को गुणवत्ता के नाम पर पैक करके बेच रही कंपनियों के मुनाफों से काफी कम पैसा खर्च करके, किसी भी क्षेत्र के पानी को पीने के लायक गुणवत्तायुक्त बनाया जा सकता है। नमकीन पानी वाले सारे इलाकों में पानी से नमक अलग करने के संयंत्र लगाए जाने चाहिए। पानी की गुणवत्ता को देखने और इसे सुनिश्चित करने का काम स्थानीय वरिष्ठ नागारिकों और धार्मिक संस्थाओं को दिया जाना चाहिए।

6. मध्यम आकार के और सीमित लागत में बनाए जा सकने वाले, जल शुद्धिकरण संयत्रों के विकास के लिए जो गांवों और कालोनियों के स्तर पर काम कर सकें, शोध और विकास को प्रोत्साहन देना जरूरी है। जहां तक चेक डैम, वर्षा जल के संग्रहण और ड्रिप इर्रीगेशन (बूँद-बूँद वाली सिंचाई) का सवाल है, बड़े स्तर पर विशेषज्ञ सलाह और आर्थिक सहायता प्रदाय की आवश्यकता है। वर्षा के पानी को जमीन के अन्दर (रेन वाटर हार्वेस्टिंग) ले जाने के लिए शहरों में सड़क के किनारे, ओवर ब्रिजों

के नीचे एवं तालाबों, नदियों के किनारे पर आसानी से बड़ी मात्रा में किया जा सकता है। मकानों से वर्षा जल का संरक्षण मन को बहला सकता है, लेकिन रेगिस्तान के अन्यत्र ज्यादा कारगर नहीं है।

7. गंगा, आवे जम-जम (मक्का) एवं बोल्गा (रूस) का पानी दुनिया के अन्य पानी, और किसी भी पैकेट बंद पानी से अच्छा है। इसे उचित उपयोग के लिए प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। नदियों के पवित्रता एवं स्वच्छता के लिए धार्मिक संस्थाओं को अपनी जिम्मेदारी बढ़ानी होगी। चूँकि राज्य एवं केन्द्र सरकार तालाबों को सुरक्षित, संरक्षित, स्वच्छ रखने में नाकामयाब रही है-और रहेगी भी। इसलिए यह जरूरी है कि राज्य-केन्द्र तालाबों और झीलों को समाज को सौप दे एवं उसके रखरखाव मे सहयोग के लिए कुछ धनराशि दे। घरों में बर्तनों की धुलाई में रसायन के स्थान पर राख के प्रयोग को बढ़ावा देने की जरूरत है, जिससे पानी में रसायन की मात्रा कम हो सके।

8. घर की रसोइयों और धुलाई से निकले हुए पानी के उचित उपयोग के लिए घर की छतों पर सब्जियों आदि का उत्पादन में उचित है। परिवारों को खराब पानी को शुद्ध कर पुनः इस्तेमाल के लायक बनाने वाले छोटे घरेलू संयंत्रों के इस्तेमाल के लिए प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए ताकि बगीचों में पानी देने, फर्श की साफ-सफाई और वाहनों की धुलाई के लिए ताजे पानी का प्रयोग न हो। साफ-सफाई के लिए कोयले से बिजली बनाने वाले संयंत्रों की राख और मुल्तानी मिट्टी से बने घरेलू फेस पैकों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। राख का प्रयोग नदियों, तालाबों और भूतल जल के शुद्धीकरण के लिए भी किया जा सकता है।

9. अगर बड़े किसान सिंचाई के पानी को छोटे किसानों के पास जाने से रोक देते हैं, तो इसके लिए कड़ा दंड उचित है।

एक बाल्टी से छलकता हुआ पानी दूसरी बाल्टी को खाली कर देता है। सारे राष्ट्रीय जल संसाधनों पर प्रकृति के हरेक प्राणी का, नदी के स्त्रोत से लेकर इसके समुद्र में गिरने तक एक समान अधिकार है।
रहीम कहते हैं:
''रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।

पानी गए न ऊबरे, मोती, मानुष, चून''।।***

2

शुद्धता और स्वच्छता

हमें यह मानना ही पड़ेगा कि इस समय हमारे गांव, शहर और महानगर हमारी आशा के अनुरूप स्वच्छ नहीं हैं। हमारी रिहायशें या तो जरूरत से ज्यादा सफाई से थक गई हैं, या फिर गंदी ही रहने के लिए छोड़ दी गई हैं। बहुत बार तो हम, एक जगह को साफ करने के लिए, बाकी सब जगहों को और गंदा बना देते हैं।

हांलाकि गांवों में कचरे को ठिकाने लगाने के लिए कोई संगठित व्यवस्था नहीं हैं, लेकिन इसके बाद भी वे उन महानगरों से बहुत साफ हैं जहां पर कचड़े के निष्पादन के लिए बड़ी और संगठित व्यवस्थाएं हैं।

गांवों के हमारे महानगरों से ज्यादा स्वच्छ होने का क्या कारण है- निश्चित ही इसका कारण गांवों के आदमी की सरल जिंदगी में निहित है, जिसको जीते हुए, ग्रामीण कोई अनावश्यक कचरा पैदा ही नहीं करता।

शुद्धता (हाइजीन) शब्द का अर्थ है, शरीरगत मूल अवयवों जीनों में उच्चता, जो स्वस्थ जीवन के लिए, शुद्ध वातावरण के निर्माण की दिशा में प्रेरित करती है। हाइजीन व्यक्तिगत चुनाव और प्रयास पर निर्भर है हांलाकि इसका उद्भव सामूहिक प्रयास के द्वारा प्राप्त की गई स्वच्छता में ही निहित है।

समस्या तब पैदा होती है जबकि, स्वच्छता को बनाए रखने वाले व्यक्ति के साथ, जो कि स्वस्थ जीवन की धुरी है, दूसरे या तीसरे दर्जे का या यहां तक कि अमानवीय व्यवहार किया जाता है। आमतौर पर सभी प्रवचनकर्ता मन और शरीर की शुद्धता और सफाई पर जोर देते हैं, तब ऐसा कैसे हो जाता है कि, इस काम को सामूहिक रूप से करने वाला, कम महत्वपूर्ण हो जाता है या फिर त्याज्य ?

ऐसा लगता है कि मंदिर में दीप जलाना और गुंसलखाने की सफाई करना एक समान महत्वपूर्ण चीजें ही होनी चाहिए, और अगर ऐसा है तो ऐसा करने वालों के प्रति व्यवहार भी समान ही होना चाहिए। वह समाज जो ईश्वर के रहने के लिए स्वच्छ

वातावरण के सृजन में लीन व्यक्ति को समान और सम्मानजनक व्यवहार प्रदान नहीं करता, वह किसी दूसरे समाज द्वारा दबा दिया जाता है, हरा दिया जाता है या यहां तक कि गुलाम बना लिया जाता है, फिर चाहे यह कितना भी शक्तिशाली क्यों न रहा हो। एशिया के पतन में, यह सबसे महत्वपूर्ण कारणों में से एक रहा और दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि एशिया के स्वयं के बुद्धिजीवियों ने- आत्मा की सफाई के तथाकथित प्रवक्ताओं ने समाज ऐसा होने दिया। स्वच्छता में सौंदर्य का वास है, इसी में ईश्वर निवास करता है।

अ. कुलमिलाकर हमारी स्वच्छता के स्तर में मच्छर भगाने वाली चीजों के आविष्कार के बाद गिरावट ही आई है। मच्छर भगाने वाली चीजों के निर्माणकर्ता, और इनकी बिक्री के लिए बनी हुई खुदरा व्यापारियों की श्रृंखला ने आम गंदगी और पानी के जमाव को बढ़ावा दिया है, और मच्छरों के खतरे को जरूरत से ज्यादा बढ़ाकर प्रस्तुत किया है। लोगों, नगरपालिकाओं और निगमों के आलस्य, और इनके किसी भी विकल्प के अभाव ने तो आम स्वच्छता को और भी खराब कर दिया है।

ब. औद्योगिकीकरण और इसके अपरिमित फलों की आशा ने जो अंधापन पैदा किया, उसके कारण नदियों के गंदा होने को अनदेखा कर दिया गया। इस तरह के औद्योगिकीकरण से, न तो इतने मीठे फल आए हैं और न ही आएगें, हां नदियों की गंदगी ने बड़ी जनसंख्या को प्रभावित जरूर कर दिया है। अब नदियों की इस गंदगी से वे लोग क्षोभ से भर गए हैं जो कि जल राशियों की पूजा करते हैं, प्रकृति के प्रेमी हैं, और उनके अलावा आम लोग भी जो इन नदियों के पास रहते हैं।

स. जो गंदगी इकट्ठा करता रहता है उसका जीवन भी गंदा हो जाता है। केवल साफ वातावरण में ही समृद्धि और प्रसन्नता का वास होता है। सुअर से घृणा करने का अर्थ, गंदगी को साफ करना है, सिर्फ सुअर को घृणा करने से कुछ नहीं होता, इससे तो केवल गंदगी की सफाई के प्राकृतिक रास्ते ही बंद होते हैं, और सच तो यह है कि सुअरों की संख्या और इनके साथ-साथ मक्खियं की संख्या भी बढ़ जाती है और हमारी घृणा में

भी थोड़ा सा इजाफा ही होता है। धार्मिक संस्थाओं को साफ-सफाई और शुद्धता की जिम्मेंदारी लेने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

1. सड़े-गले पदार्थों के अवयवों को इकट्ठा करने, और प्रयोग के बाद इनके उपयोग की व्यवस्था करने के लिए तकनीकि प्रगति को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

2. गंदगी के स्वामी बनकर कमाओ और स्वच्छता की स्थापना करो, इस नारे के आस-पास गतिविधियां शुरू की जानी चाहिए, और इसके लिए आवश्यक उपकरण और धनराशि स्वयं समाज द्वारा इस कार्य के लिए आगे आने वाले युवकों को प्रदान की जानी चाहिए।

3. धार्मिक केंद्रों और वरिष्ठ नागरिकों की समितियां को नगरपालिकाओं की स्वच्छता संबंधी गतिविधियों का नेतृत्व करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। उन्हें बाजारों और कालोनियों में उपयुक्त स्थानों पर जनसुविधाएं बनाने के लिए ही प्रेरित करना चाहिए। शासन को सफाई के काम में अपने आपको धीरे-धीरे हटाना होगा एंव सीधे समाज को यह जिम्मेदारी सौपनी होगी।

4. मंदिरों और मस्जिदों को अपनी स्वयं की और आस-पास की सफाई के लिए तब तक विशेष आर्थिक सहायता प्रदान की जानी चाहिए, जब तक कि ये वित्तीय रूप से आत्मनिर्भर न बन जाएं।

5. स्कूलों और कालेजों को, अपने छात्रों को अपने परिसरों घरों और समाज को शिक्षा के उपयुक्त और पवित्र रखने के लिए, कुछ विशेष पुरुष्कार आदि देने के तरीकों से प्रेरित करना चाहिए।

6. नदियों और दूसरे जलाशयों की सफाई के लिए धार्मिक केंद्र, वरिष्ठ नागरिकों की समितियां और पैंसठ वर्ष की उम्र से बड़े सम्मानीय व्यक्तियों को सहयोग देने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

7. स्वच्छता के मार्ग में रुकावट बन रहे उद्योग को, बिना किसी हिचक के दूसरे स्थान पर ले जाना, जरूरी है, फिर चाहे उद्योग कितना भी बड़ा क्यों न हो। सुरक्षा,

उपयुक्तता, सावधानी, स्थान परिवर्तन और झाड़ू लगाना (अंग्रेजी के पांच एस से अनुवादित), इनको उद्योग और घरों दोनों में प्रोत्साहन देना जरूरी है।

स्वच्छता और शुद्धता की समस्या केवल तब खड़ी होती है जबकि हम, स्वस्थ जीवन के इस आधार के व्यवहारिक कार्य में लगे योजनाकारों और कार्यकर्ताओं के प्रति दूसरे, तीसरे या चौथे दर्जे का व्यवहार शुरू करते हैं, और कभी-कभी अमानवीय भी। ऐसा समाज जहां वास्तविक काम करने वाले को, प्रवचन देने वालों और पांसे बैठाने वालों की तुलना में ज्यादा सम्मान मिलता है, वही समाज नेतृत्व करने के काबिल है और उसमें ऐसा बने रहने की शक्ति भी।

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, प्रस्ताव है कि स्वच्छता कर्मियों को शासकीय नौकरियों में दिया जाने वाला चतुर्थ वर्ग का स्तर समाप्त किया जाए, और यह भी प्रस्ताव है कि उसे पुजारी के लगभग समतुल्य ही पारिश्रमिक मिले। अगर ऐसा किया जाता है तो थोड़े ही समय में आरक्षणों की आवश्यकता महत्वहीन हो जाएगी।

माध्यम स्वच्छता का संदेश तो फैला ही रहे हैं। स्वच्छ घर, स्वच्छ मोहल्ले, स्वच्छ शहर, जिले आदि के लिए प्रतियोगिताओं, पारितोषिकों और रनिंग ट्राफीस की व्यवस्था होनी चाहिए।***

प्रदूषण

किसी स्थान पर अवांछित चीजों का जमा हो जाना ही प्रदूषण है। हवा, पानी या जमीन कहीं भी अवांछित चीजें जमा करने से इनके अग्नि एवं आकाश तत्व (खाली स्थान) का भी संतुलन बिगड़ जाता हैं इनके अतिरिक्त जीवों और वनस्पतियों का जीवन खराब हो जाता हैं।

वायु प्रदूषण के लिए:

1. इसका बुनियादी कारण है बड़ी मात्रा में ईंधनों का जलना, अत्याधुनिक प्रदूषण रहित वाहनों का प्रयोग, दूसरे स्थानों पर ईंधनों को जलाने की प्रदूषण रहित तकनीकों का इस्तेमाल, और कचरे और मृत पशुओं का उचित निष्पादन, यही रास्ते हैं।

2. वाहनों और बिजली के क्षेत्र में उपभोक्तावाद को प्रोत्साहन देने वाली, आसान ऋण योजनाओं की समीक्षा करने और आवश्यक होने पर इन्हें बंद करने की जरूरत है।

3. शहरों और महानगरों में जनसंख्या घनत्व बढ़ाने वाली प्रवृत्यिं को रोकना जरूरी है। समुचित विचार विमर्श, समीक्षा और योजनान्वयन कर मानकीकृत शहर की अवधारणा को लागू करने की प्रक्रिया को प्रोत्साहन देना उचित है।

4. वृक्षारोपण में सुधार जरूरी है, हांलाकि रास्ते में खड़े पेड़ ट्रैफिक जामों का कारण बन प्रदूषण को बढ़ा रहे हैं तो उनको काटने की अनुमति भी।

5. वाहनों में हार्न की तेज बजने की सीमा फैक्ट्री के स्तर पर ही सीमित कर देनी चाहिए। अत्यधिक हार्नो, तेज संगीत, लाउड स्पीकर के प्रयोग, पर नियंत्रित पाबन्दी लगाना जरूरी है।

6. ऊर्जा के क्षेत्र में बर्बादी को न्यूनतम किया जाना और उपयोगिता का अधिक से अधिक प्रभावी बनाना ही लक्ष्य होना चाहिए, यह नहीं कि हम ऊर्जा के संरक्षण के नारे लगाए और किरायों का बढ़ाते चले जाएं। औद्योगिक क्षेत्र के अलग-अलग प्रदूषणकारी उत्पादों के लिए अलग-अलग और विशेष संयंत्र बनाए जाने के लिए शोध का प्रोत्साहन देना जरूरी है। सारे उद्योगों में बाउण्ड्रीवाल और खंभों पर वृक्षारोपण की धारणा को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

7. खदान क्षेत्रों और कोयला ऊर्जा संयंत्रों, तेल शोधक संयंत्रों और पेट्रोकेमिकल तथा खादों के संयंत्रों हेतु शोध और विकास की समर्थन देने की आवश्यकता है।

जल प्रदूषण के लिए:

1. क्षेत्रों के स्तर पर जल प्रदूषण दूर कर उसके पुनः उपयोग के लिए संयंत्रों की स्थापना पर विचार किया जा सकता है (जैसे चौके का पानी-बगीचे में, बाथरूम में इस्तेमाल करना) ।

2. धार्मिक संस्थाएं जो नदियों, कुओं, तालाबों, झीलों को पवित्रकारी मानते हैं (पहले जल क्षेत्र में पेशाब या पाखाना करने को अनीतिपूर्ण माना जाता रहा है, और आज दुर्भाग्यवश हम पूरी के पूरी नाली का पानी ही नदी में बहा रहे हैं), वही जलाशयों के प्रदूषण को दूर करने का काम कर सकते हैं। अगर हम अपने जलाशयों को प्रदूषण से मुक्त रख सकें, तो हमारे देश की बड़ी आबादी के लिए, जल प्रदूषण का अध्याय लगभग बंद हो जाता है।

3. गर्म देशों में जल प्रदूषण की समस्या ठंडे देशों से कहीं कम है, यहां गर्मी के कारण पानी का ऑक्सीकरण तेज होता है, फलतः कीटाणु जल्दी मरते हैं। इसलिए ठंडी जगहों जैसे हिमालय और अंटार्कटिक या ठण्डे देश जैसे कनाडा पर जल प्रदूषण कम करने के लिए ज्यादा कठिन प्रयासों की आवश्यकता है।

आणविक और एस्बेसटॉस कचरा:

इन्हें मानव विहीन द्वीपों में, गहरे गड्डे कर, सीमेंट कंक्रीट की मोटी परतों के अंदर दबाना ही उचित है। न तो तीसरी दुनिया के देशों में, न ही समुद्र में और न अंतरिक्ष में।

भूमि प्रदूषण के लिए:

1. पालीथीन का प्रयोग सड़क निर्माण के लिए होना चाहिए। कूड़ा बीनने वाले कूड़े में से अलग-अलग चीजों को अलग-अलग कर उन्हें प्रोसेसिंग करने वाले उद्योगों को बेचकर कमा सकते हैं, और सामान्य जैव कचरा खाद बनाने के काम आ सकता है।

2. कस्बों और गांवों के नियोजन में भवन निर्माण के स्थापत्य की सेवाओं को सुधारने की जरूरत है, ताकि सूर्य की प्राकृतिक रोशनी, हवा और सौर ऊर्जा आधारित उपकरणों के लिए उचित व्यवस्था हो सके।

पंचतत्वों में अंतर्निहित शक्ति के उपयोग द्वारा उनके प्रदूषण को दूर करने का विचार ही अंत में सर्वोत्तम है। कुएं का पानी कुएं में जाए, हमारी पट्टी सूख जाए। यही सर्वोत्तम दर्शन। ***

4

वातावरण

वातावरण-वायु का आवरण. हवा का वह घेरा जो धरती के चारों ओर है, यह हमारे जीवन को उसी तरह प्रतिबिंबित करता है, जिस तरह हमारी वेशभूषाएं हमारे व्यक्तित्व को। हमारा ही स्वभाव प्रकृति को सृजित करता और उसे वैसा बनाकर रखता है, जैसी कि वह है, और प्रकृति भी ऐसा ही करती है। अगर हम प्रकृति के साथ प्रयोग कर रहे हैं, तो प्रकृति भी हमारे साथ किसी न किसी रूप में प्रयोग कर रही है।

जब किसी क्षेत्र या गृह नक्षत्र का वातावरण जीवन के लिए उपयुक्त हो जाता है तो वहां जीवन का स्वभावतः सृजन हो जाता है, और जब हम प्रकृति को ही इस तरह बदल देते हैं कि वह किसी प्रजाति के लिए रहना कठिन हो जाए, तब वह प्रजाति अपने शारीरिक रूप को छोड़कर ऊर्जा की एक तरंग की तरह वातावरण में लीन हो जाती है, और जब फिर वही वातावरण आता है तो यह फिर भौतिक रूप धारण कर लेती है।
यह तथ्य है फिर जगह चाहे कोई भी हो धरती, चंद्रमा या मंगल कुछ इस तरह जैसे कि वृत्तों और वृत्तों के विस्तार के नियमों में मौजूद उत्क्रमणीयता, यह संभव है कि यह चक्र एक मिनट में पूरा हो जाए, एक माह ले ले या फिर करोड़ां साल, समय इस बात पर निर्भर करता है कि प्रकृति में वृत्त खींचा कहां गया है। ग्रहों पर खिंचे हुए चक्रों को सैकड़ों से हजारों साल लगते हैं, और ग्रहों के बीच की जगह को अरबों साल।

ग्रहों के बनने और टूटने में, और ग्रहों के बीच के, और ग्रहों के पर्यावरण के बनने और टूटने में लावा गर्म, मध्यम गर्म, ठंडे कण एक साथ इकट्ठे होकर एक क्षेत्र (जोन) बना लेते है ओर यह क्षेत्र अलग-अलग ऊर्जा तरंगों से जुड़ी होती है। दो समान रूप से गर्म जगहों के बीच में, पूर्ण शून्य निर्मित हो जाता है, ऐसे स्थानों को हम ब्लैकहोल कहते

हैं। इन छेदों की आकृति कैसी भी हो सकती है, तिकोनी, चौकोनी, षडभुजाकार या गोल, और यह बराबर शक्ति के विरोधी ऊर्जा स्त्रोतों की संख्या पर निर्भर करता है। हमारी धरती पर, बरमूडा त्रिकोण को भी ऐसे ही समझा जाता है।
प्रत्येक ग्रह में ठोसों, द्रवों और गैसों का अपना-अपना हिस्सा है और इनसे मिलकर बनी हुई अपनी आकृति है।

सूरज पूरी तरह गोल है, जबकि सारे ग्रह पूरी तरह गोल नहीं है, उनमें थोड़ा या अधिक दीर्घवृत्ताकार (अण्डाकार) अंश है। ग्रह सूरज के चारों तरफ लगभग गोल रेखाओं में घूमते हैं, अलग-अलग सौरमंडलां की ऊर्जाओं में थोड़ा सा अंतर ग्रहों की गति को प्रभावित करता है। ग्रहों की सतहों के एक के बाद एक गर्म और ठण्डे होने से ग्रह अपनी धुरी पर घूमते हैं। पूर्णमा के दिन सूर्य की ऊर्जा को जब चंद्रमा रोक लेता है, समुद्रों में ज्चार आते हैं, और इस तरह के ज्ःवार उन आदमियों के दिमाग में भी आते हैं, जिनके दिमाग में कोई खराबी होती है, और इसीलिए हम उन्हे ल्यूनेटिक कहते हैं।

पूरा का पूरा सौरमंडल अपने नजदीक मौजूद दूसरे बड़े सौरमंडलों की ओर सीधी रेखा में चलता है, और अगर पास में कई सौरमंडल मौजूद हों तो यह गति आड़ी-तिरछी हो जाती है, अगर दो आौर अधिक सौरमंडल टंकरा जाएं तो प्रलयकारी टकराव (विगवैंग) होता है।

किसी ग्रह का जीवित रहना न रहना, इसके खुद के और आसपास के दूसरे सौरमंडलों से प्रभावित होता है, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण तो ग्रह के स्वयं के भीतर चलने वाली गतिविधि ही ग्रह को प्रभावित करती है और साथ ही ग्रह की गतिविधि में हस्तक्षेप और दूसरे ग्रहों की खोज भी निःसंदेह इसे प्रभावित करती है।
जैसे कोई भी दूसरी जीवित प्रजाति लुप्त या प्रगट हो सकती है, इसी तरह ग्रह और सौरमंडल भी जन्म मृत्यु की प्रक्रिया के परे नहीं है।

वातावरण की उम्र लंबी हो, इसमें आत्मीयता और प्रचुरता बना रहे, और यह प्यारा लगता रहे, यह इस बात पर निर्भर करता है कि इसके निवासी कैसा व्यवहार करते हैं।

धरती का वातावरण जिसमें ध्रुव भी हैं और ध्रवों से बहुत दूर भूमध्य रेखा पर मौजूद क्षेत्र भी, एक जहां छह-छह महीने की दिन और रात होते हैं, और दूसरे जहां बारह घंटे के दिन और रात, ऐसे इलाके जहां बर्फ है और ठंडा रेगिस्तान, और वे इलाके जहां रेत है और गर्म रेगिस्तान। इस पर ऐसे इलाके भी हैं जहां कोहरा और ठंड है और ऐसे इलाके भी जहां सिर्फ नमी और गर्मी। ये सब धरती के एक ही शरीर के हिस्से हैं।

किसी भी एक इलाके में छोटा सा कोई विछोह, दूसरे इलाकों में भी विक्षोम की एक लहर पैदा कर देता है, किसी एक क्षेत्र में कोई बड़ा हस्तक्षेप, दूसरे इलाके में बड़े विक्षोभ पैदा कर देता है, और इसका परिणाम होता है अकाल, बाढ़ें, चक्रवात, सुनामी, जो कभी-कभी आते हैं और प्रदूषण और वैश्विक तापमान में वृद्धि जो कि लगातार चल ही रही हैं। इनका परिणाम है जीवितों में कभी-कभी प्रकट हो जाने वाली नई-नई बीमारियां, और लगातार बना रहने वाला तनाव, गुस्सा एवं बिगड़ा हुआ रक्तचाप।

प्रकृति और अस्तित्व में विपरीत चीजें एक दूसरे की ओर खिचती हैं, और समान चीजें एक दूसरे से दूर जाती हैं, यही नियम है दो ध्रुवीयों को, एवं समान का आकर्षण एवं विपरीत का अलगाव यह नियम है एक ध्रुवीय चीजों का।

इस तरह से पूरी तरह से आपस में जुड़े हुए जीवन के जाल में अगर कोई देश यह सोचता है कि वह दूसरे देशों के पर्यावरण का उपयोग कर अपने देश के निकटवर्ती वातावरण को   बचा लेगा, और इसलिए हिमालय के क्षेत्रों से पेड़ खरीदता है, अपने तेल संसाधनों को बचाकर दूसरे इलाकों के ईंधनों को अनावश्यक रूप से जलाता है, अपनी खदानों को सुरक्षित रख दूसरे इलाकों से अयस्क खरीदता है, निश्चित ही मूर्खों के स्वर्ग में निवास कर रहा है। हमें यह समझना ही होगा कि अगर हिमालय पर बर्फ पिघलती है तो इससे पैदा हुई बाढ़ न सिर्फ भारत को प्रभावित करेगी, बल्कि बंग्लादेश और दूसरे देशों के समुद्र तट भी इसकी गिरफ्त में आएंगें। दिल्ली, लंदन और पैरिस से निकल रही कार्बनडाईऑक्साइड की अतिरिक्त मात्राएं, आसपास के इलाकों एवं देशों पर असर डालती है।

हम प्रकृति की इस व्यवस्था को समझता है और धरती को माता की तरह और भारत आकाश को पिता की तरह इज्जत देता है। भारत प्रकृति को जीतने का विचार ही नहीं करता, और इसीलिए प्राथमिक तौर पर यह हमारी ही जिम्मेदारी है कि हम अपने वातावरण को सुधारे और व्यापक विश्व को लयबद्ध सहअस्तित्व की शिक्षा दें।

वतावरण को लयबद्ध बनाये रखने के लिए निम्नलिखित पर ध्यान देना होगाः-
इसके लिए सर्वप्रथम महत्वपूर्ण यह है कि हम न तो उपयोगितावाद को बढ़ावा दें और न ही इसके माया जाल में फंसे।

1. लकड़ी का अत्यधिक आयात एवं निर्यात रोका जाना चाहिए। इसके लिए न सिर्फ हमें अपने लिए निर्णय लेना है, बल्कि सभी देशों को इसके लिए प्रेरित भी करना है।
2. अयस्कों और प्राकृतिक खादों के आयातों एवं निर्यात पर रोक लगाई जानी चाहिए। आयात निर्यात केवल धातुओं और अधातुओं के बने हुए और परिष्कृत सामानों का होना चाहिए।
3. हमें समाचार पत्रों से अपने पृष्ठों को सीमित रखने का आग्रह करना करना होगा। समाचार पत्रों पर लगने वाले आयात एवं निर्यात शुल्क को ठीक किए जाने की जरूरत है।
4. भारत न तो समुद्र और न ही जमीन पर कोई बड़ा आणुविक परीक्षण करेगा। और न ही वैश्विक समुदाय द्वारा ऐसा किए जाने का समर्थन। सारी जमीन और पानी अंतः संबंधित हैं और सारे जीवजगत की विरासत। भारत दूसरे ग्रहों के लिए किए जाने वाले अभियानों का हिस्सा नहीं बनेगा, हमारे लिए चंद्रमा ही बहुत है।
5. ओजोन लेयर के क्षरण के तर्क के आधार पर अनावश्यक प्रतिबंधों और इसी तर्क के आधार पर तीसरी दुनिया के देशों को मंहगी तकनीक आयात करने के लिए डाले जा रहे दबावों का भारत स्वीकृत नहीं करेगा, और न ही प्रोत्साहित।
6. ऊर्जा के लिए प्राथमिक और पुनः पैदा की जा सकने वाले स्त्रोतों (जैसे-लकड़ी, कोयला, गोबर, गैस, हवा, सूर्य) को भारत प्रोत्साहित करेगा और द्वितीयक स्त्रोतां को प्रोत्साहित करने की कोई आवश्यकता नहीं (जैसे बिजली, हाइड्रोजन गैस) ।

7. बड़े स्तर पर हो रहे निर्माण जैसे बड़े बांधों, बड़े शहरों, नदियों को आपस में जोड़ने की योजनाओं को न तो भारत अपने हाथ में लेगा और न हीं इनका प्रोत्साहन करेगा।
8. व्यापार, प्रशासन और समूचे जीवन में जीवन की जटिलता को कम करने और उसके स्थान पर सरलता और प्रकृति से नजदीकी को जगह देने की जरूरत है।
9. गुजरे जमाने के वन कानूनों के आधार पर यातायात को रोकने और बड़े शहरों में वृक्ष संरक्षण के नाम पर यातायात मार्गों के विकास को रोकने जैसी गतिविधियों पर रोक लगानी होगी।
10. गृह निर्माण और वाहनों के क्षेत्र में अराजकतापूर्ण विकास को नियंत्रित और ठीक करने की जरूरत है, इसमें हमारा भी भला है और पड़ोसी देशों का भी।
11. भारत में बड़े स्तर पर वृक्षारोपण का काम हाथ में लेना होगा और पड़ोसी देशों की अनुमति से सारे हिमालय क्षेत्र में भी।
12. यह देखा गया है कि हैदराबाद जैसे बड़े शहरों का तापमान दो डिग्री घटाने के लिए, बड़े आकार के दस लाख पेड़ों, पीपल, नीम, बरगद और आम आदि लगाने की जरूरत है। भारत को इसके पांच सौ जिलों में से हरेक में कम से कम दस लाख और इसके हरेक तहसीलों में पांच लाख पेड़ लगाने की जरूरत है।
13. वृक्षारोपण के फल व्यक्तियों और उनके स्थानीय केंद्रों के ही हैं। किसी भी काम के लिए किसी भी पेड़ को काटने न काटने का निर्णय, उस इलाके के वरिष्ठ नागरिकों की समिति का होना चाहिए, सरकार का नहीं।
14. वृक्षारोपण के जरिए बड़ी संख्या में रोजगारों का सृजन करना होगा। हरेक बड़े पेड़ को लगाने पर लगाने वाले और इसे पानी देने वाले को कुछ पैसे मिलने चाहिए और इसके साथ ही पेड़ के फलों, फूलों और अन्य अवयवों पर अधिकार। रोजगार की तलाश में लगे सारे लोगों को यह मौका मिलना चाहिए कि उन्हें वृक्षारोपण के क्षेत्र में रोजगार मिले, इसके लिए हरेक पेड़ को पालपोषकर बड़ा करने पर उन्हें पुरुष्कार के रूप में गुजारा भत्ता और पेड़ के द्वारा दी जा रही चीजों पर अधिकार मिले। इस काम को लालफीताशाही और नगरपालिकाओं की जगह, सांसदों, वरिष्ठ नागरिकों और धार्मिक संस्थाओं द्वारा ही किया जाना उचित है।
15. धार्मिक संस्थाओं और वरिष्ठ नागरिकों की समितियों में ही यह क्षमता हो सकती है कि वे जलाशयों और नदियों से संबंधित कामों को अपने हाथों में ले सकें,

इसके लिए उन्हें प्रोत्साहन, वित्तीय सहायता और यहां तक की आवश्यकता पड़ने पर सुरक्षा एजेंसियों जैसे पुलिस का पूरा सहयोग प्रदान करना होगा।

16. तालाबों और झीलों के उत्पाद क्षेत्र की ही संपत्ति है, जबकि नदियों के उत्पाद सारे देश की, और इसीलिए इनके रखरखाव की जिम्मेदारी भी इसी तरह बांटी जानी होगी।

17. चेक डैम, वर्षा जल के संग्रहण, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा और बायोगैस को प्रोत्साहन करना होगा।

18. शिक्षा प्रणाली में न सिर्फ पर्यावरणीय संतुलन के महत्व को स्थान दिया जाना उचित है बल्कि इसके लिए आवश्यक व्यक्गितगत पहल कदमी को भी।

जीवन के कर्म और जीवन की कला योग, नृत्य और तंत्र से परिष्कृत होती है, और इन्हीं से व्यापक जीवन प्रकाशित होता है।***

5

न्याय व्यवस्था

दुर्भाग्यपूर्ण है कि बीसवीं शताब्दी में भारत में और सारी दुनिया में न्याय का प्रयोग इस तरीके से हुआ है- ''अँधेरा कायम रहे, सम्राट किलविष की जय हो उजाले का नाश हो, अँधेरे का राज हो''। न्याय और व्यवस्था के नाम पर।

(अ). न्याय तो केवल बर्फ की तरह सर्द हो गया है, और हो सकता है कि पश्चिम में इसे बनाया ही इस तरह गया हो। भारतीय न्याय व्यवस्था की बुनियादी ध्वनि, नवीनता को ध्वनित करती है, और यह सरकार की जिम्मेदारी है कि वह अपनी व्यवस्था सुचारु रूप से चलाते रहने के लिए, न्याय प्रदान करे।

(ब). सामाजिक संगठन (शासन) हमारी सामूहिक बुद्धिमत्ता का पहला उत्पाद है, इस बुद्धिमत्ता से सुरक्षा और न्याय व्यवस्था का जन्म होता है। समाज और इसके शासन के लिए, सुरक्षा सर्वप्रथम है, प्रशासन और इससे जुड़ा हुआ न्याय दूसरे स्थान पर।

(स) ''सामाजिक व्यवस्थाएँ न्याय के लिए नहीं है, न्याय सामाजिक व्यवस्था के लिए है''। इसलिए न्याय की परिभाषा, अर्थ और उसका प्रयोग देशकाल के अनुरूप बदलते रहते हैं। न्याय को न्याय संगत होना चाहिए, देश और काल के अनुरूप, और किसी दिए गए भौगोलिक क्षेत्र में समय के साथ आए परिवर्तनों के अनुकूल समायोजित हो सकने के लिए गतिशील और लचीला। न्याय व्यवस्था को उच्चतम नियामक संस्थाओं को नियमित रूप से रिपोर्ट देनी चाहिए या फिर नियामक संस्थाओं को न्याय व्यवस्था की प्रतिमाह समीक्षा करनी चाहिए। फिर यह उच्चतम नियामक संस्था भारत का राष्ट्रपति हो सकता है, जिसको परिस्थिति और स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए संसद सुझाव दे भी सकती है और नहीं भी।

(द) भारत के लिए, जैसे को तैसा होना चाहिए न कि (जस्ट आइस) बर्फ की तरह सर्द इसका केन्द्रीय महत्व है, अगर हम वास्तव में ही स्वस्थ और आनंदित, प्रगति के

पथ पर अग्रसर और गतिशील समाज बनना चाहते हैं। औपनिवेषिक न्याय व्यवस्था में अपना सरोकार प्रदर्शित करने और उपनिवेष को बनाए रखने, दोनों के उद्देश्यों से, न्याय"जैसे को तैसा" से "बर्फ की तरह" होता रहता था। और जब न्याय सर्द हो जाता है तो देरी और अंधेर तो स्वाभाविक परिणाम है।

आज के समय के राजनैतिज्ञ को, जो हालाकि न्याय व्यवस्था के विरुद्ध मुँह खोलने से डरता है, यह समझना चाहिए कि आज जो न्यायाधीश विद्यमान है वे भारत सरकार के पारिश्रमिक प्राप्त करने वाले कर्मचारी ही हैं-केवल शासकीय सेवक, और उसे न्याय व्यवस्था के सम्बद्ध में सुधारात्मक कदम उठाने के सम्बद्ध में निर्णय लेते समय डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। अगर संसद सुधारात्मक कदम न उठाएगी, तो यह सम्भव है कि लोग स्थानीय गुण्डों को न्याय प्रदाताओं के सिंहासन पर बैठाने लगे।

1. सबसे पहला कदम तो यह है कि न्याय की देवी की आँखों से काली पट्टी हटा दी जाए और न्यायाधीशों और वकीलों के परिधानों से अन्धकार के प्रतीक काले रंग को।
2. सर्वोच्च न्यायालय में हमें व्यवहारिक रूप से इंग्लिश के प्रयोग को छोड़कर, राष्ट्रभाषा हिन्दी, संस्कृत और कुछ स्थानीय भाषाओं को प्रवेश देना चाहिए।
3. छोटे अपराधों के लिए एक अकेले न्यायालय के द्वारा एक निश्चित समय सीमा में दिया गया निर्णय अंतिम होना चाहिए। तुच्छ अपराधों को सामने लाने के लिए, अखबारों को उन्हें प्रकाशित करने के लिए प्रोत्साहन किया जाना चाहिए, फिर चाहे ये अपराध पुलिस में दर्ज हों या नहीं। इससे देश की न्याय व्यवस्था में गतिशीलता आएगी। सभी तरह के जेलों के भीतर, सभी तरह की अपराधियों के प्रति व्यवहार मानवीय होना चाहिए, और स्वयं के सुधार की ओर इंगित।
4. जजों और न्यायाधीशों की नियुक्ति सम्माननीय, ईमानदार और बुद्धिमान नागरिकों द्वारा की जानी चाहिए, वे वकील हो भी सकते हैं और नहीं भी, और उन्हें कानूनों की शिक्षा-दीक्षा देने के साथ-साथ, प्राकृतिक न्याय और भारत की सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक आवश्यकताओं की भी शिक्षा दी जानी चाहिए। 5. संसद प्रतिनिधियों, मीडिया के प्रतिनिधियों, वकीलों और जजों के बीच गैर सार्वजनिक

विचार विमर्श को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, वे मोटे रूप से अपनी सहमति और असहमति के बिन्दुओं को लोगों के सामने अपना मत देने के लिए रख सकते हैं।

6. पूर्वीय ढंग से न्यायिक व्यवस्था का विकास करने के लिए एक व्यापक समिति का गठन किया जाना चाहिए, (जिसने हिन्दू, मुस्लिम, चीनी, यहूदी, पारसी और यहाँ तक कि न्याय की ईसाई प्रणालियों का भी समावेश हो), ताकि न्याय प्रकृति से निकलता हो, केवल तभी न्याय उचित भी होगा और प्राकृतिक भी।

7. कागजों और दस्तावेजों के आधारित न्याय के स्थान पर स्पष्ट रूप से देखने पर आधारित और सक्रियता से पहले से ही न्याय व्यवस्था की स्थिति को भापने वाली और गुप्तचर व्यवस्था को प्रोत्साहन दिया जाएगा। इस तरह के गुप्तचरों को चिन्हित किया जाना चाहिए जो भ्रष्टाचार के लिप्त लोगों को पहचान सकें। और इन्हें बिना किसा भेदभाव के चयनित किया जाना चाहिए, और अगर ये स्वयं अपनी प्रतिबद्धता का उल्लंघन करते हैं तो इन्हें दोहरा दंड दिया जाना चाहिए।

8. न्याय सरकार की जिम्मेदारी है और यह स्वयं अपनी खोजबीन के आधार पर अपराध का पता लगाती है, तो यही सबसे अच्छा रास्ता है। अपराधी की बात सुनने में से यह तय किया जा सकता है कि उसके लिए कितना दंड उचित है। ऐसी परिस्थिति में न तो पीड़ित की ज्यादा आवश्यकता है और न हीं वकीलों की।

9. शासन का निर्माण मनुष्य की एक बाह्य गतिविधि है, इसलिए ताकि सुरक्षा और प्रतिरक्षा की इसकी भीतरी आवश्यकताएँ पूरी हो सकें। मनुष्य इसलिए सरकार नहीं बनाता, और न ही यह शासन का विशेषाधिकार है कि वह मनुष्य के व्यक्तिगत मामलों में दखलनदाजी करने लगे। शासन को किसी के भी घर में घुसने के अपने बुनियादी और वैधानिक अधिकार की सीमाओं का ज्ञान होना चाहिए, और उसे इन सीमाओं को उल्लंघन करने का कोई अधिकार नहीं। अगर यह ऐसा करता है तो, यह सही शासन नहीं है, और यह तो अपने नागरिक को ही अपना गुलाम बना लेता है।

यह ध्यान में रखते हुए, शासन को उन व्यक्तिगत क्षेत्रों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं, जिनके लिए मनुष्य के पारिवारिक सम्बन्ध और इसके बुजुर्ग ही इतने जिम्मेदार और शक्तिशाली हैं कि वे जीवन के बहुत से ऐसे मामलों से, देशकाल की विभिन्न परिस्थितियों में स्वयं निर्णय ले सकें। अतः पारिवारिक विषय जैसे कि शादी, तलाक, महिलाएँ, पत्नी, पुत्री, बहन, माता, आदमी, लड़का, भाई, पति और पिता को

तो शासन के क्षेत्र के बाहर ही होना चाहिए। शासन और इसकी न्याय व्यवस्था द्वारा इनमें कोई भी हस्तक्षेप, बुनियादी अधिकारों का शासन द्वारा ही हनन है। (अगर शादी कोर्ट ने कराई है तो ही कोर्ट किसी विवाद या तलाक के विषय में निर्णय लेने का हकदार है। अगर शादी समाज ने कराई है तो समाज स्वयं विवाद के किसी भी मुद्दे का हल निकालने के लिए जिम्मेदार है, और अगर कोर्ट इसमें हस्तक्षेप कर रहा है, तो कोर्ट स्वयं विध्वंसात्मक भूमिका का निर्माण कर रहा है, जो कि उस बुनियादी अधिकार के ही खिलाफ है, जिसके लिए कोर्ट की स्थापना की गई है, जो सरकार इस तरह के कोर्टों का चलाती है उस औपनिवेषिक, गैर या जन विरोधी कहा जा सकता है। न्याय व्यवस्था को पारिवारिक मामलों से मुक्त कर देने से और इन्हें समाज पर छोड़ देने से, एक समान नागरिक संहिता की बात अपने आप ही पूरा हो जाती है।

10. अर्धन्यायिक सेवाएँ जैसे कि श्रम न्यायालय, खाद्य और स्वच्छता, जिनका काम करने एक मात्र तरीका यह बचा है कि वे एक पक्ष को दबाने के लिए दूसरे पक्ष के साथ हिस्सा बाँट करें, के बारे में यह विचार करना आवश्यक है कि कैसे एक या दूसरे पक्ष के साथ किए जाने वाले भेदभाव को कम करने के लिए क्या किया जाए, यह जिम्मेदारी वरिष्ठ नागरिकों और धार्मिक संस्थाओं की समिति को दी जा सकती है।

11. अपराधों को रोकने के लिए सतर्कता बरतना, अपराध होने का इन्तजार करने से बेहतर है।

12. पुलिस और सेनाओं द्वारा किया जाने वाला अत्याचार, नागरिक अधिकारों का प्रश्न नहीं है, यह तो न्यायिक प्रक्रिया की असफलता का प्रश्न है। आज न्यायिक व्यवस्था समाज की संरक्षक होने के स्थान पर, सामाजिक ताने-बाने को छिन्न-भिन्न करने का काम कर रही है। किसी भी शहर में होने वाली और लम्बे समय तक चलने वाली गड़बड़ियों के लिए उस समय की सारी न्याय व्यवस्था को जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए। कोई केस दर्ज नहीं किया गया, न्याय न किए जाने का बहाना नहीं बन सकता। न्याय व्यवस्था में भ्रष्टाचार को, जो कि सारी दुनिया में बढ़ता चला जा रहा है, भारत में अंकुश में रखना होगा, ताकि हम अच्छी तरह से रह सके एवं विश्व के समस्त उदाहरण प्रस्तुत हो सकें।

13. न्याय व्यवस्था में उच्चतम स्तर की ईमानदारी और सरलता को बरकरार रखने के लिए, न्यायाधीशों के ऊपर लगातार निगरानी रखना आवश्यक है, उनमें

भ्रष्टाचार का पता लगते ही उन पर कार्यवाही की जानी चाहिए, और सरलता बनाए रखने के लिए यह जरूरी है कि उनकी गाड़ियों पर से लाल रोशनियाँ हटा दी जायें।

न्यायाधीशों या वकीलों का महिमा मंडल बताता है कि न्याय की स्थिति खराब है, (क्योंकि महिमा मण्डल तभी बनता है जब स्थिति/चीजें खराब हों) ।हम परमात्मा से प्रार्थना करें कि न्याय व्यवस्था अपने आप को धरती पर जीते जागते स्वर्ग के निर्माण के कार्य में लगायेगी।***

मीता-जीवन शैली प्रारूप से

परिशिष्ट-2,

भारत के लिए जल जमीन एवं जंगल से जुड़े महत्व पूर्ण प्रश्नों पर सनातनी वैश्विक व्यवस्था के आलेखों से उद्धहरण:

प्रश्न : -यदि भारत महान था तो बर्बाद क्यूँ हुआ? और यदि भारत महान है तो बर्बाद क्यों दिखता है?

उत्तर :- कर्म एवं धर्म दैनिक कार्यों की एक सतत यात्रा है, इन कार्यों से जब भी मुंह मोड़ा तभी गलती हुई और परेशानी और समस्या बढ़ी। धर्म एवं कर्म से विमुख होने और उनकी पलायनवादी परिभाषा करने से समस्याएं और परेशानियाँ बढ़ती जाती है, और समयांतर में पता ही नहीं चलता कि मूल में समस्या क्या है, समस्या की जड़ क्या है?

जीवन के लिए और जीवन चलता रहे इसके लिए, प्राथमिक रूप से जरूरी है शारीरिक सुरक्षा, परिवारिक सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा एवं भौगोलिक सुरक्षा। इस सुरक्षा को नजरअंदाज करने से गिरावट और गुलामी का दौर शुरू होता है, और इसके साथ ही छद्म शांति का पाठ पढ़ने से गिरावट और गुलामी का दौर काफी लंबे समय तक चलता है या चल सकता है?

जब भी व्यक्ति परिवार एवं समाज अपनी जिम्मेदारियों से विमुख हुआ या अपनी जिम्मेदारियों को सरकार के ऊपर छोड़ दिया या सरकार ने शक्ति पूर्ण तरीके से या साम-दाम-दंड-भेद, छलकपट- द्वारा व्यक्ति, परिवारो और समाज को तोड़ दिया हो और सारी जिम्मेदारियां, सारी शक्तियां अपने पास अर्जित कर ली हो-तब व्यक्ति, परिवार, समाज ही नहीं सरकार की भी दुर्दशा निश्चित होती है चाहे वह सरकार कितने ही लोक हितकारी, जनहितकारी बनने की कोशिश करें।

जीवन की सतत् यात्रा में शारीरिक सुरक्षा, भौगोलिक सुरक्षा (आंतरिक एवं बाह्य) के अतिरिक्त मुख्य रूप से भोजन, जल एवं पर्यावरण की सुरक्षा का महत्व है, और जीवन के पांच तत्व पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि एवं अकाश का शरीर में एवं समाज (संसार) में अनुपात बना रहे यही मानव जीवन का मुख्य कर्म एवं धर्म है, यही एक सतत यात्रा है। चूँकी इन पांच तत्त्वों का शरीर में एवं संसार में समन्वय बिगड़ा है, फलस्वरूप जीवन में दुख बढ़े हैं, सुख कम हुए हैं, समाज के सभी क्षेत्रों (सामाजिक आर्थिक धार्मिक एवं राजनैतिक) में परेशानियां बढ़ी है, हमारी आस्था डगमगयी है हमारे आस्था के केंद्रों, हमारे धर्म स्थानों की हालत खराब हुई है।

यदि इसको सामाजिक धरातल पर देखे तो गिरावट का दौर उस दिन शुरु हो गया था जिस दिन नंदी को बधिया किया गया था। नंदी को बधिया करके बैल बनाने से, नंदी गाय का श्राप भारत और दुनिया के उन सभी देशों पर लगा जहाँ गाय होती है, एवं उन देशो पर भी जो दूध पीते है, गाय का, नंदी का माँस खाते है।
इस बधियाकरण से इन्सानों को खेती करने में आसानी तो हुई लेकिन धीरे-धीरे आदमियों की शारीरिक ताकत कम होने लगी, आदमी आराम-परस्त हुआ। प्रजनन के लिए कम नंदी बचे लिहाजा आनेवाली गायों की, नंदी की, बैल की जैविक विकास की जगह ह्रास हुआ और ऐसी गायों का दूध पीने से समाज में व्यभिचार बढा (जैसा अन्न वैसा मन) । जब भी यह प्रश्न आता है कि यदि भारत महान था तो बर्बाद क्यूँ हुआ? और यदि भारत महान है तो बर्बाद क्यों दिखता है? तब यह उपरोक्त कथन काफी है कि "भारत कि बर्बादी एवं भारत के प्रभाव/संपर्क में आये तमाम क्षेत्रों कि बर्बादी का)यही मूल कारण भी है ।

प्रश्न : भारत की यह बर्बादी कब तक चल सकती है, या चलेगी?

उत्तर: यह बर्बादी तब तक चलती है या चल सकती है जब तक मूल में ना लौटे और मूल में स्वभाविक धर्म युक्त कर्म की सतत् यात्रा मे फिर से प्रवृत ना हो जाये। कर्म की व्यवस्था बने, श्रम का विभाजन ठीक हो, आय का विभाजन ठीक हो, अर्थ की व्यवस्था अर्थ पूर्ण हो और इन सब के मध्य न्याय बना रहे इसके लिए जरूरी होगा कि

विनाशकारी बुद्धि के लोगों की कमी हो और सज्जन एवं सृजनात्मक ह्रदय के लोगों की बढ़ोतरी हो।

जब तक नंदी का बधियाकरण बंद नही होगा-तब तक समाज में शक्ति नही आयेगी, व्यभिचार रहेगा और जब तक नंदी-गाय का व्यापार बंद नही होगा, तब तक यह बर्बादी चलेगी - चाहे भारत एवं भारत जैसे देश इसके अतिरिक्त कुछ भी कर ले।

सुरक्षा रहे, रोजगार मिले, न्याय रहे और इसके मध्य समन्वय एवं समरसता बनी रहे के लिए जरूरी होगा एक पुनरुत्थान, एक अभयुत्थान। प्रकृति, प्रकृति रहे वह विकृति नजर नहीं आये और वह सुकृति की तरफ अग्रसर हो इसके लिए आवश्यक होगा जिम्मेदारियों का एहसास और फिर उसके अनुसार उन उत्तरदायित्व, उन कर्तव्यो, उन कार्यों को निष्पादन करने की प्रक्रिया जैसे व्यक्तिगत, स्वास्थ्य, सुख, स्वच्छता, सामर्थ्यवान, सुसंस्कृति में बने रहने की जिम्मेदारी व्यक्ति की स्वयं ज्यादा है उस के उपरांत ही परिवार, समाज, सरकार की जिम्मेदारी इसी क्रम में आती है, उपरोक्त को ध्यान में रखें तो प्राथमिक सुरक्षा (शारीरिक सुरक्षा, भौगोलिक सुरक्षा, भोजन/खाद्मदान्, जल एवं पर्यावरण), स्वास्थ्य, न्याय, शिक्षा समाज की जिम्मेदारी है एवं विशेष सुरक्षा एवं आपदा प्रबंधन सरकार/संसार की जिम्मेदारी है , इसे ठीक करने के लिए एक बहुत बड़े संकल्प, श्रम और साधन की जरूरत है-एक व्यवस्थागत सुधार की जरूरत है।

प्रश्न :- भारत को अपनी बर्बादी के दौर से बाहर आने के लिए क्या-क्या करना होगा? **कौन क्या करेगा**? **यह सब कैसे होगा?**

उत्तर :- भारत को अपनी बर्बादी के दौर से बाहर आने के लिए एक बहुत बड़े संकल्प, श्रम और साधन की जरूरत है-एक व्यवस्थागत सुधार की जरूरत है। क्या-क्या करना है, यह सब मिलकर तय करना होगा। इन कार्यों को सुचारू रूप से चलाने के लिए, श्रम के विभाजन (बच्चे, व्ययस्क, अति व्ययस्क एवं वृद्धों के मध्य) उम्रगत, रुचिगत

होना जरूरी है और इनको पर्याप्त साधन एवं संसाधन मिले एवं मिलते रहे इसके लिए आय का विभाजन जरूरी है-उदाहरण के लिए यदि कोई सौ रुपये कमाये तो इस सौ रुपये पर उसके मां-बाप, पुत्र-पुत्री, पति-पत्नी, समाज - सरकार का कितना- कितना अधिकार है? ऐसे में सीधा-सीधा गणित कहता है, कि सभी का बराबर का अधिकार है और सौ रुपये को आठ भागों में बाँट देना चाहिए - पुत्र-पुत्री, पति-पत्नी, माता-पिता तीन पीढ़ी एक साथ सभी का बराबर का अधिकार-और समाज एवं सरकार का भी इन्हीं के समकक्ष बराबर का अधिकार (समाज सामूहिकता का प्रतिनिधित्व और सरकार संसारिकता का प्रतिनिधित्व करती है-इसलिए इन्हें भी बराबर का अधिकार मिलता है)।

बुजुर्गों एवं महात्माओं ने कहा कि:-

1, प्रकृति में कुछ भी संयोग ,घटना ,दुर्घटना या प्रयोग नही है ,सब एक क्रम में चल रहा है और यदि हम प्रकृति के इस क्रम के साथ चलते है तो हम कम से कम तनाव में होते है ,और बहाव का साथ देगें तो आनंद में भी रहेंगे। यदि हम प्रकृति के बहाव के विपरीत खडे होने ,चलने या अपने आप को प्रदर्शित करने के प्रयास में रहते है तो सर्वप्रथम हम स्वयं तनाव में आते है ,विरोध में खडे होने के कारण ज्यादा मेहनत से थकान ,थकान से खीझ ,चिडचिडापन ,गुस्सा आना स्वाभाविक है।

विरोध में लंबे समय खडे रहने के लिए अतिरिक्क्त उर्जा की आवश्यकता ,साधन , संसाधनो की आवश्यकता एवं नशे की आवश्यकता होती है। विपरीत में खडे होने के कारण-यह जो संरचना दुनिया में खडी करते है उसके कारण बहाव में बहने आले प्रकृतिस्थ लोगों को परेशानी खडी होनी शुरु होती है-और यहीं से टकराव की शुरुवात होती है। ऐसा देखा जाता है कि इस टकराव के कारण या तो कुछ नही सें जो विकास खडा किया गया वह तहस-नहस हो जाता है या इस टकराव के कारण विकास में कुछ फेर-बदल होते है-और यदि फेर बदल की श्रंखला चली तो कालांतर में यही अच्छी व्यवस्था में परिवर्तित हो जाती है ,जैसे अफरा -तफरी→ विकास एवं टकराव → बेहतर व्यवस्था।

इस युग में धीरे-धीरे यह विकास → और विकास के साथ टकराव के बाद बेहतर विकास कि स्थितियाँ धीरे-धीरे कम होती जा रही है ,इस कारण आज जो विकास हो रहा है वह जल्दी ही विनाश की ओर अग्रसर हो सकता है ,ऐसे में संवादहीनता से संवाद की ओर आना होगा और संवाद से सहमती एवं सहमती से सहयोग कि दिशा में आगे बढना होगा ,तभी हम सुरक्षित है ,अन्यथा-जो प्रकृति में प्रकृति के विरोध में खडे है वह पूरी पृथ्वी पर एक छत्र राज्य करने की लालसा से दो विश्व युध्दो और फिर उसके बाद के शीतयुध्द और आर्थिक युध्द एवं नाकाबंदी के वाद काफी आक्रामक ,एवं इस आक्रामकता में बहशीपन एवं पागलपन की ओर अग्रसर है , और सब बरबाद कर सकते है।

आज ऐसे व्यक्ति खनिज दोहन के लिए ,व्यापार के लिए रास्ता बनाने को बडे-बडे जंगलो में महीनों तक आग लगाए रखने में ,अलग-अलग देशो में आंतरिक आंदोलन भडकाने ,असंतोष ,अफरा-तफरी भडकाने के साथ वहाँ वायरसो से बीमारी फैलाने से भी बाज नही आते।

यह उंगुलियों पर गिनने वालों का कोई ईमान धर्म नही बचा-ऐसा लगता है। जहाँ यह रहते है ,वहाँ भी भिखारी है ,बेघरवार है ,वहाँ भी बीमारियाँ और गुलामी जैसा माहौल है। इसके अतिरिक्त इनका एक दयालु वाला भी चेहरा है जिसके तहत यह प्रकृति बचाने , नशा विरोध ,अहिंसा के लिए लोग खडे करते है ,उन्हे प्रोत्साहित करते है ,उन्हे ख्याती दिलवाते है ,उन्हे पुरुस्कृत करवाते है ,उनके नाम पर पुरस्कार दिलवाते है ,अपनी महात्वकांक्षा के लिऐ यह तथाकथित अहिंसा के पुजारी ,बचपन बचओं के नेताओं , प्रकृति बचाने के लिए खडे हुए बच्चे-बच्चियाँ को मानव से महामानव बनाते है , प्रचारित करते है ,ऐसी स्थिती में हमारे पास क्या रास्ता है ,हम खडे हो ,शक्ति ऊर्जित करे ,इन महत्वाकांक्षी सहित सभी हिस्सेदारों से संवाद करे और समन्वित बढोत्तरी , विकास एवं खुशहाली का माहौल बनाए ,नही तो बरबादी पक्की है।

2). अच्छे दिन आयेगे ही-(पूरी पृथ्वी पर इंसान (स्त्री-पुरुष दोनों) हो सकता है-अलग रंग, कद-काठी, रंग-रोगन, शक्कल-अक्कल, खानपीन, वेशभूषा, भाषा, विज्ञान, कला अपनाए लेकिन आंतरिक रुप से इंसान एक ही है) और यह हम सबको मिलकर लाना

होगा, कैसे होगा–क्या होगा?, क्या-क्या करना होगा?, कब करना होगा?, कहाँ करना होगा?, कौन क्या करेगा? यह सब मिलकर तय करना होगा, जिसके लिए जरूरी होगा हम सब अपने पर एवं एक दूसरे पर भरोसा करे-एवं खुले मन से-खुले दिल से एक संवाद शुरू करें, सभी (सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनीतिक) विषयों पर, संवाद के सारांश पर सहमति जताये एवं उसे परिणाम तक ले जाने के लिए परस्पर सहयोग करे एवं पूर्ण होने पर उसकी समीक्षा करे, कोई और सुधार की जरूरत हो तो सुधार करे और एक ऐसी सुव्यवस्था बनाएँ जिसमे जो वह संवाद, सहमति एवं सहयोगात्मक कार्य एवं उसकी समीक्षा से प्राप्त किया वह सुचारू रूप से हम सब के लिए एवं आने वाली भविष्य की संतानो के लिए चल सकें।

प्रत्येक क्षेत्र में सामाजिक स्थल पर एक केंद्र का प्रचालन शुरु करें जहाँ लोग अपनी समस्या, सामाजिक समस्या या सांसारिक समस्यायों पर विचार विमर्श करें, परेशानी में एक-दूसरे या अनजान का भी सहयोग कर सके, और आपदा की स्थिति में सुरक्षा, संरक्षण, सहायता पा सके। यह केंद्र बच्चों को, महिलाओं को एवं पुरुषों को उनके अपने क्षेत्र में सलाह-सहयोग दे-उनकी बात सुन सके-जिससे कम से कम रोजमर्रा के घरेलु एवं आपसी झगडे निपट सके और किसानों, विद्यार्थियों की आत्महत्या की घटनाऐं तो रुक सके।

हर क्षेत्र में ऐसे केंद्र-बुध्मित्ता सूचना, सलाह, समन्वय एवं सहयोग स्थल के रुप में कार्य कर सके-की आवश्यकता है-जो समाज को खडे करने होंगे, राजकीय सहयोग के साथ लेकिन बिना राजकीय नियंत्रण के; जिससे समाज में जीने के कार्य और कला समायोजित रहें।

संवाद, समन्वय बनायेगा जो हमें व्यक्तिगत एंव सामूहिक शक्ति प्रदान करेगा और हमें व्यक्तिगत एंव सामूहिक कर्म कि ओर प्रवृत करेगा–जिसके सफल आयोजन–प्रयोजन से हमारे अच्छे दिन आयेगे ही जो हमारी व्यक्तिगत एंव सामूहिक सफलता (अच्छे फल) का सूचक होगा और जिसकी क्रमिकता सुख/प्रसन्नता का सूचक होगा।

3). कहावत है - “अंधेर नगरी, चौपट राजा-टके सेर भाजी, टके सेर खाजा (टके सेर = एक पैसे/रुपये किलो)”-कि जहाँ न्याय नहीं होता वहाँ मिठाई एवं सब्जी एक ही भाव में मिलती है, और ऐसा राज्य चौपट/बर्बाद हो जाता है। आज भी मौजूदा न्याय व्यवस्था को देखकर कहावत सही प्रतीत होती है।

पूरी स्थिति ठीक है तो कहा जाता है कि इस समाज में ,इस देश में ,चीजें अच्छी चल रही है -यहाँ न्याय है ,और यदि चीजें ठीक नहीं चल रही है तो कहा जाता है कि यहाँ कोई न्याय ही नहीं है, सब ओर अराजकता है, जिसका मन आये, वह लूट ले, सज्जनों की सुनवाई नहीं, बदमाशों को कोई डर नहीं है, ऐसे में आज यदि देखे तो समाज एवं देश की पूरी की पूरी स्थिति, में प्राथमिक रुप से न्याय व्यवस्था का ठीक ना होना कहा जा सकता है।

अभी की व्यवस्था में न्याय की कीमत, सिरदर्दी, एवं समय अधिकांशतः अन्याय सहन करने से ज्यादा हो गयी है, इसलिए लोग शिकायत नही करते ,और ऐसा प्रतीत होता है कि सब ठीक ठीक ही तो चल रहा है। कही न कही हर एक व्यक्ति के मन में व्याप्त असुरक्षा, व्यवस्था को सुरक्षा दे रही है। इसके अतिरिक्त कहते है कि यदि शासक निरंकुश हो जाये तो जनता अंकुश में रहती है, इसलिए क्रूर शासकों के समय या भारत में गुलामी के दौर में जब खुले में फाँसी और हर तीन-चार माह में एक दो फांसी दे दी जाती थी तब यही न्याय व्यवस्था काम चला ले जाती थी।
आज की मौजूदा लोकतांत्रिक व्यवस्था में-बच्चा-बूढा ,छोटा-बडा ,ज्ञानी-अज्ञानी , शैतान-संत ,चोर-पुलिस ,जज-अभियुक्त ,सब एक बराबर ,सबका एक बोट-टके सेर माजी-टके सेर खाजा ,यह कैसे अच्छा हो सकता है और कैसे अच्छा कहा जा सकता है?

अंग्रेजों द्वारा दी हुई मौजूदा न्याय व्यवस्था ने स्वतंत्रता के सत्तर वर्षों में स्थिति को और भी गंभीर ही बनाया है, जरुरत है वैकल्पिक न्याय व्यवस्था की जैसे जूरी व्यवस्था, पंच-सरपंच की व्यवस्था, पचहत्तर वर्ष से ऊपर के सन्यासी द्वारा न्याय की व्यवस्था इत्यादि, जिससे न्याय में निष्पक्षता के साथ-साथ समसामयिकता एवं सार्वभौमिकता बनी रहे।

भारत का सविंधान स्वयं कभी आम जनता के मध्य नहीं चुना गया - इसलिये आज भारत में सही मायने में लोकतंत्र की जगह प्रतिनिधि लोकतंत्र चल रहा है, इस लोकातंत्र में न तो इहि-लोक सवरँता है न परलोक। आज का Democrocy लोकतंत्र पता ही नही चलता कि मृत्यु लोक का तंत्र है या शैतान लोक का तंत्र है या पृथ्वी लोक का ,यह अंग्रेजी में Demo-व्यक्ति की जगह है DEMON - शैतान एवं हिन्दी में- लोकातंत्र की जगह कालो-तंत्र व्यवस्था है, जिस कारण वर्तमान लोकतंत्र में संसद भी न्याय व्यवस्था से छेड़छाड़ करने की स्थिति में नहीं है, “ऐसे में सिर्फ एक ही विकल्प बचता है-जनमत संग्रह” इस पर व्यापक एवं खुलकर चर्चा हो और मौजूदा न्याय व्यवस्था (अंग्रेजों द्वारा दी हुई) को जनमत संग्रह द्वारा ठीक किया जाये?

4) व्यवस्थाये भ्रष्ट हो गई है और यह भ्रष्ट व्यवस्थाये भी अंदर तक सड़-गल गयी है और यह ऐसा ही लम्बे समय से चल रहा है-इसके परिणाम स्वरूप जनता भी इन्हें स्वीकार चुकी है और कहीं ना कहीं जनता अपने को भी भ्रष्ट कर चुकी हैं।
*भारत एवं अन्य देशों में वास्तव में भ्रष्टाचार था नहीं, गुलामी के दौरान भारत में व्यवस्था के अंदर इसका कृतिम गर्भाधान कराया गया और सबसे पहले बीट कांस्टेबल को इस काम पर लगाया गया और उससे कहा गया कि तुम अपने क्षेत्र में शासकीय लगान/कर के अतिरिक्त सुरक्षा देने के नाम पर लोगों से ,व्यापारियों से, पुलिस के लिये पैसा एकत्रित करो। फिर यह पैसा पुलिस एवं प्रशासन के अन्य सरकारी महकमों में बटवायाँ गया और इन सभी सरकारी कर्मचारियों को वेतन से अतिरिक्त खर्च की आदत डलवायी गयी। पुलिस के बीट कांस्टेबल के द्वारा इस अतिरिक्त उगाही को , स्थान्तरण , पदोन्नति के द्वारा प्रबंधित एवं नियंत्रित किया गया।

एक बार अतिरिक्त खर्च कि आदत कर्मचारियों के घर के सदस्यों को लग गयी तब उनसे अधिकारियों द्वारा कुछ भी कार्य कराना आसान हो गया और इस तरह शासन की पकड़ अपने कर्मचारियों पर उनकी नैतिकता के ऊपर हो गयी और अंग्रेजों को) या कहे किसी भी शासक को(अपनी मर्जी से कर्मचारियों से अनैतिक कार्य कराना भी आसान हो गया। इस खुली लूट को शासकीय न्याय व्यवस्था से रक्षित, प्रतिरक्षित एवं

पोषित करवाया गया (एक तो कोई पुलिस के भ्रष्टाचार के खिलाफ पुलिस में ही शिकायत करेगा नहीं , इसके बाद यदि किसी ने शिकायत कर भी दी तो न्यायालय अपनी कार्यशैली के द्वारा इसे लम्बा खींचेगा एवं फिर बहुत समय बाद पर्याप्त साक्ष्य ना होने की बिना पर आरोपित कर्मचारियों को बाइज्जत बरी करने के व्दारा)।

आज भी यदि देखे तो कार्यशैली लगभग यही है। आज यह व्यवस्था में उस अमरबेल की लता/जड़ कि तरह हो गयी कि यदि कोई सख्त शासक प्रशासक आया भी तो कुछ समय ऐसा लगेगा कि सब ठीक हो गया है, लेकिन जैसे ही प्रशासक बदलेगा, सत्ता परिवर्तित होगी यह अमरबेल जैसी भ्रष्टाचार की लता फिर फलने फूलने लगती है। इस भ्रष्टाचार को कम करने के लिये न्याय व्यवस्था जो भ्रष्टाचार को रक्षित प्रतिरक्षित पोषित करती है को बदलना होगा।

(5 सत्ता में राजनैतिक पार्टियों के परिवर्तन से बहुत ज्यादा फर्क पड़ता नहीं। देश में इतने चुनाव एवं इतने नेता हो गये कि काम करने वाले किसकी सुने और किसकी ना सुने? सब कुछ व्यापारिक हो गया है, समाचार भी। शिक्षा, स्वास्थ्य एवं न्याय जो बेहतर समाज के लिए दान एवं सहयोग पर आधारित होने चाहिए, वह आज सबसे खर्चीले और खून चूसू हो गये हैं।

अन्याय बढ़ता जा रहा है, गरीबी बढ़ती जा रही है, गरीबी-अमीरी में अंतर बढ़ता जा रहा है, देश की मुद्रा का अवमूल्यन होता जा रहा है, भिखारियों की संख्या भी इतनी बढ़ गयी कि भीख भी मिलना मुश्किल हो गया-अच्छे कामों के लिए सहयोग तो दूर की बात है?

भारत एवं विश्व भर में अर्थव्यवस्था के मध्य बाजार में यह प्रचारित किया जाता है कि देश में अधिकांश जनता गरीब है इसलिए रोजमर्रा की वस्तुएं सस्ती होनी चाहिए और कभी-कभार उपयोग में आने वाली वस्तुएं या सेवायें (जैसे डॉक्टर, वकीलों की फीस) महंगी हो सकती है, जिसके फलस्वरूप देश में जो सत्तर प्रतिशत जनता रोजमर्रा की चीज पैदा करने बेचने एवं सेवा देने में लगी हुई हैं की वस्तुएं सस्ते में बिकने लगी और इन्हें पैदा करने वाले सत्तर प्रतिशत लोग गरीब हो गये।

इन सब को भुलाने के लिए सरकार और विश्व की कुछ बड़ी एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियां शराब, धूम्रपान, दवाइयां, पोर्नोग्राफी का प्रलोभन देती है और इनसे कमाई करती है और इस कमाई का कुछ हिस्सा इनके विरोध और नैतिकता के प्रचार-प्रसार में भी खर्च करती है-जिससे जनता इसी चक्र में उलझी रहे।

ज्यादा वोट पाने के लिए, सपने दिखाकर वोट पाने के लिए जरूरी है कि कम उम्र के ज्यादा वोटर हो चाहे उन वोटरों को इतनी समझ ना आयी हो कि यह निर्णय ले सके की शादी करना चाहिए या नहीं, शराब पीना चाहिए या नहीं (वोटिंग की उम्र अठारह, शादी करने की इक्कीस वर्ष, शराब पीने की पच्चीस वर्ष) ने लोकतंत्र की उलझनों को और बढ़ाया है एवं उत्तरदायित्व को तिलांजलि देने का व्यवहार अग्रसर किया है।

(6 आज हम किसी दूसरे शहर में घूमने या किसी काम से जाये-जहाँ हमें कोई व्यक्तिगत तौर पर जानता न हो-ऐसे में यदि हमारा पैसा एवं सामान-लुट जाये, चोरी चला जाये, छूट जाये तो हमें समझ ही नहीं आता कि हम मदद के लिये कहाँ जाये , न्यायालय, पुलिस, जिलाधिकारी, विधायक, सांसद, मंदिर, मस्ज़िद, चर्च, गुरुद्वारा कहाँ जाये?, जो हमें खाना दे दें और घर वापिस जाने का किराया दे दें (जो हम उसे घर पहुँच कर धन्यवाद सहित वापिस भी कर दें)। आज स्वतंत्रता के सत्तर वर्ष बाद भी हम देश भर में एक भी जगह ऐसी खड़ी नहीं कर पायें? ऐसे में सिर्फ एक ही विकल्प बचता है कि इस पर व्यापक एवं खुलकर चर्चा हो और ऐसे केंद्र बनाये जायें जो इस इन्टरनेट के युग में इस सूचना कि भरमार के बीच में सही जानकारी दे दे ,परेशानी में हमारा सही मार्गदर्शन कर दे हमें खाना खिला दे और हमारी मदद कर दे।

7) जिन पंच तत्वों से जीव एवं प्रकृति बनती है एवं चलती है-जल, वायु, धरती (भौतिक पदार्थ) एवं आकाश (खाली स्थान) उन सभी के अनुपात का संतुलन बिगडा है-इस असंतुलन के फलस्वरूप प्रकृति का मन एवं मनुष्य का मन रूग्ड हुआ है जो आपसी संबंधो पर असर डालती है और जीवन मे झगडे बढाती है तथा सुख कम करती है। हमारी आस्था डगमगायी है और हमारे आस्था के केद्रों की हालत बिगडी है, हमारे आस्था के केंद्र सिर्फ सामान्य कर्मकांड के स्थान या कर्मकांड के साथ शिक्षा एवं

स्वास्थ्य के व्यापार के केंद्र भर रह गये है और वह भी समाज के न होकर कही निजी, कही यह सीमित (ट्रष्ट या भ्रष्ट) समिति के और कही यह शासकीय हो गये है।

मन से शरीर को गति मिलती है, मानसिक प्रदूषण से शारीरिक दुर्बलता आती है, अगर मौजूदा प्रदूषण को देखें तो भारत एवं विश्व में यह धर्म के क्षेत्र में अधिकाधिक (मंदिर, मस्जिद, चर्च, गुरुद्वारा सबने लाउडस्पीकर लगा लिये हैं), शासन के क्षेत्र में उसके बाद, दृश्य, श्रव्य एवं लिखित समाचारों एवं प्रचार माध्यमों में वाद-विवाद के रूप में, सामाजिक क्षेत्र में देखे तो वाहन प्रदूषण, पर्यावरण प्रदूषण, कबाड़ी एवं घूम घूम कर शोर मचाते हुए सामान बेचने वालों के रूप में एवं परिवारिक एवं व्यक्तिगत रूप से देखे तो संबंधों एवं जीवन शैली में प्रदूषण एवं भ्रष्टता ,हमारे अपने भ्रष्ट आचरण के रूप में दिखाई देती है।

8) समाज में 'हम से मै' महत्वपूर्ण हो गया है और अर्थव्यवस्था जो जमीन एवं जमीन के ऊपर पर निर्भर थी वह जमीन एवं जमीन के नीचे या अंतरिक्ष पर निर्भर हो गई है।

विकास करने के नाम पर बढ़ोतरी बाधित हुई है। सारा ध्यान जी.डी.पी. पर देने के कारण प्रसन्नता बाधित हुई है, जी.डी.पी. पर ध्यान केंद्रित रखने से धनी का धन, बीमार की बीमारी, बदमाश की बदमाशी एवं गरीब की गरीबी बढ़ी है, दो विपरीतो में (जिनके पास है एवं जिनके पास नहीं हैं - जैसे अमीरी-गरीबी) अंतर बढ़ा है।

देश मे, समाज में, परिवार मे व्यक्ति की प्रसन्नता इस आशय से मापी जा सकती है कि वह बीमारी, अशिक्षा, लड़ाई-झगड़ा, अव्यवस्था से जूझने में अपना पैसा/सामर्थ, व्यय करता है या प्रेम, सौहार्द, सेहत एवं स्वच्छता, ज्ञान एवं विज्ञान, अनुसंधान एवं अन्वेषण में, ऊर्जा, मनोरंजन, सुरक्षा, दान-दक्षिणा में निवेश कर रहा है। हम सब की बर्बादी इस आशय से मापी जा सकती है कि हम नशा, लड़ाई-झगड़े, भोग-विलास, में कितना व्यय या कहें कितना अपव्यय कर रहे हैं। मानव जाति के सर्वांगीण सुखमय जीवन के लिए आवश्यक है कि हम अपने विकास या बढ़ोतरी को मापने का पैमाना

जी.डी.पी.-से सकल प्रसन्नता अनुपात (जी.एच.आर/आई Gross Happines ratio/index) रखें।
सोने की लंका जला दी जाती है एवं सोने की चिड़ियाँ लूट ली जाती है, जरुरत है जीवंतता की-जरुरत है जल-जमींन-जंगल में स्वस्थ जीव जन्तुओ की एवं इनके मध्य पूरी धरती (अर्थ) पर टिकी एक समन्वित व्यवस्था की एक-अर्थ (धरती, पैसा, उद्देश्य) व्यवस्था-अर्थव्यवस्था की।

9) रिलीजन (हिंदू, बौद्ध, ईसाई, जैन, मुस्लिम, रजनीश वाद) एवं रिलीजन जैसे विभिन्न वाद जैसे-पूंजीवाद, साम्यवाद, एवं राजनैतिक दलों का समाजवाद इत्यादि ने लोगों को मानसिक गुलाम बनाया है एवं अपने आकर्षण करने वाले प्रवचनो व्दारा इस गुलामी को व्यक्तियों की उनके स्वयं के हित में सहयोगी बताया है। यह मानसिक गुलामी, शारीरिक या भौगोलिक गुलामी से किसी भी मायने में कम नहीं आँकी जा सकती है? अगर मेरा मन तुम्हारे अनुसार या हमारा मन किसी एक रिलीजन या वाद के अनुरूप चलता है, या भारत में जैसे अभी भी अंग्रेजों के नियम चल रहे हो तब हमारी, तुम्हारी, या भारत की स्वतंत्रता कितनी है? क्या इसमें जीवन की शाश्वतता एवं सनातनता को अपनाने की सामर्थ है? इस विषय पर गहरे संवाद की जरूरत है-जिससे हम शारीरिक एवं मानसिक रूप से गुलामी से मुक्त हो सकें और स्वावलंबन या परस्पर निर्भरता की ओर अग्रसर हो सकें।

10). भारत के लिए खासतोर पर यह ध्यान देने की बात है कि भारत की गतिविधि का केंद्र क्या रहता है? बिहार में कहते है, भारत की शान-त्रेता युग में विहार-नेपाल-उत्तरप्रदेश के रास्ते दक्षिण में श्रीलंका तक जाती है, वही दूसरे युग में उत्तर प्रदेश, गुजरात के रास्ते उत्तर भारत की ओर जाती है, वही आज के युग में भारत की शान तभी तक रही जब तक बिहार आबाद रहा, उत्तरी भारत सुरक्षित रहा-कहते है-दिल्ली तो हमेशा झगडे की जड रही है, आने वाले समय के लिए भारत की गतिविधि (राजधानी) का केंद्र का चुनाव करने के लिए ज्योतिष शास्त्र का सहयोग अच्छा रहेगा।

इन मूल प्रश्नों एवं देश दुनियां की अन्य समस्यांए जैसे-धन का विभाजन, श्रम का विभाजन, रोजगार कि उपलब्धता, मशीनों का सम्यक प्रयोग, शिक्षा एवं

स्वास्थ्य की मुफ्त एवं सर्व-सुलभता, स्वच्छता, खेल, मनोरंजन, खाद्द्य एवं उर्जा सुरक्षा एवं सबसे महत्वपूर्ण शारीरिक, मानसिक एवं भौगोलिक सुरक्षा के समाधान के संदर्भ में बुजुर्गो एवं महात्माओं ने जो कहा वह सभी के अवलोकन, आवश्यक सुझाव एवं सहयोग हेतु इस अभ्युत्थान दृष्टि प्रपत्र के रूप में प्रस्तुत है।

भारत को क्रांति से ऊपर उठकर, उपयोग और फायदे से ऊपर उठकर असहयोग और अवज्ञा आंदोलनों की भाषा से ऊपर उठकर सहयोगात्मक रवैये पर कार्य करने की आवश्यकता है। असहयोग और अवज्ञा आंदोलनों का परिणाम हम आज भी हड़ताल के रूप में, अक्षमता के रूप में समय समय पर भुगतते है। अन्य क्रान्तियाँ जैसे हरित क्रांति (जिसमे जंगल तैतीस प्रतिशत से काटकर उन्नीस प्रतिशत किये गये) से जंगल कम हुयें, सफ़ेद क्रांति से दूध एवं साथ में गाय के मांस का उत्पादन बढ़ा, खाद्य सुरक्षा से गेहूँ, चावल के अतिरिक्त सभी खाद्यान विभिन्नता गायब हो गयी और पीली क्रांति(तेल उत्पादन) से पेड़ों की विभिन्नता कम हो गयी-इस कारण यह अनिवार्य हो जाता है कि हम क्रांतियों से ऊपर उठे और संवाद-सहमति एवं सहयोग की प्रक्रिया अपनाये। उपरोक्त सभी देशवासियों, विदेशों में बसे भारतीयों और सभी भारतीय मूल निवासियों के ध्यानाकर्षण के लिए प्रस्तुत है। आओ मिलकर कर्म युक्त समाज, धर्म युक्त समाज, एक मेहनती-एक मजबूत समाज का पुनः निर्माण करें।

11) भारत को क्रांति से ऊपर उठकर, उपयोग और फायदे से ऊपर उठकर असहयोग और अवज्ञा आंदोलनों की भाषा से ऊपर उठकर सहयोगात्मक रवैये पर कार्य करने की आवश्यकता है। असहयोग और अवज्ञा आंदोलनों का परिणाम हम आज भी हड़ताल के रूप में, अक्षमता के रूप में समय समय पर भुगतते है। अन्य क्रान्तियाँ जैसे हरित क्रांति (जिसमे जंगल तैतीस प्रतिशत से काटकर उन्नीस प्रतिशत किये गये) से जंगल कम हुयें, सफ़ेद क्रांति से दूध एवं साथ में गाय के मांस का उत्पादन बढ़ा, खाद्य सुरक्षा से गेहूँ, चावल के अतिरिक्त सभी खाद्यान विभिन्नता गायब हो गयी और पीली क्रांति(तेल उत्पादन) से पेड़ों की विभिन्नता कम हो गयी-इस कारण यह अनिवार्य हो जाता है कि हम क्रांतियों से ऊपर उठे और संवाद-सहमति एवं सहयोग की

प्रक्रिया अपनाये। उपरोक्त सभी देशवासियों, विदेशों में बसे भारतीयों और सभी भारतीय मूल निवासियों के ध्यानाकर्षण के लिए प्रस्तुत है। (सनातनी वैश्विक व्यवस्था से),

बंदना चौधरी